इकाई 7 मुद्रास्फीति : संकल्पना, प्रकार एवं मापन*

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 विषय प्रवेश

7.2 कीमत स्तर का मापन

7.2.1 सूचकांक की परिभाषा

7.2.2 सूचकांकों के प्रकार

7.3 मुद्रास्फीति की परिभाषा

7.4 मुद्रास्फीति के प्रकार

7.4.1 मध्यम मुद्रास्फीति

7.4.2 तीव्र मुद्रास्फीति

7.4.3 अति–मुद्रास्फीति

7.4.4 रुद्ध स्फीति

7.4.5 अवस्फीति

7.4.6 मूलभूत मुद्रास्फीति

7.5 सार–संक्षेप

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

7.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित बातों के लिए सक्षम होंगे:

- मुद्रास्फीति की अवधारणा की व्याख्या;
- मुद्रास्फीति का माप;
- मुद्रास्फीति को मापने के लिए विभिन्न प्रकार के कीमत सूचकांकों के बीच अंतर करना; तथा
- मुद्रास्फीति के प्रकारों की पहचान करना।

7.1 विषय प्रवेश

हम हर दिन अखबारों में मुद्रास्फीति के बारे में पढ़ते हैं। यह इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह एक अर्थव्यवस्था के साथ–साथ लोगों पर इसके प्रति कूल प्रभाव डालती है। एक सवाल जो इस बिंदु पर उठ सकता है वह यह है कि मुद्रास्फीति किस तरह हमारे रोजमर्रा के जीवन को प्रभावित करती है? आइए हम एक परिवार के उदाहरण की सहायता से इसे समझते हैं। मुद्रास्फीति, सरल शब्दों में, विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों में लगातार वृद्धि है। धन की आय के स्तर को देखते हुए, एक परिवार एक दिए गए कीमत स्तर पर वस्तुओं के एक समूह का उपभोग करता है। मुद्रास्फीति के साथ, कीमत स्तर बढ़ जाता है, तो पूर्ववत् आय के साथ यह परिवार पहले की तुलना में कम मात्रा में उपभोग कर पाता है।

* डॉ० गुरलीन कौर, सहायक प्रध्यापक, श्री गुरू गोविंद सिंह कॉलेज ऑफ कॉमर्स, दिल्ली विश्वविद्यालय

वैकल्पिक रूप से, इस परिवार के उपभोग के पहले के स्तर को बनाए रखने के लिए अब अधिक धन की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि परिवार की मासिक आय रु .100 है, एक ही वस्तु A पर पूरी आय का उपभोग करता है और कुछ भी नहीं बचाता है। यदि वस्तु A की कीमत रु4 है तो परिवार में एक महीने में A की 25 इकाई का उपभोग होता है। अब मान लीजिए, वस्तु A की कीमत 4 रुपये से बढ़कर 5 रुपये हो जाती है, तो यह परिवार वस्तु A की केवल 20 इकाइयों का उपभोग करने में सक्षम होगा। परिवार को वस्तु A की प्रतिमाह 25 इकाई का उपभोग बनाए रखने के लिए, रु 125 की जरुरत पड़ेगी। इस प्रकार, हम देखते हैं कि मुद्रास्फीति के साथ, मुदों की एक इकाई पहले से कम मात्रा में सामान खरीद पाती है। दूसरे शब्दों में, मुद्रास्फीति के साथ, पैसे की क्रय शक्ति कम हो जाती है।

उपरोक्त उदाहरण में, परिवार को उपभोग में केवल एक वस्तु शामिल है। लेकिन एक विशिष्ट परिवार के लिए, उपभोग में कई प्रकार की वस्तुएं और सेवाएं शामिल होती हैं। नतीजतन, अगर कुछ अन्य वस्तुओं की कीमत में गिरावट हो जाएं एक वस्तु की कीमत में वृद्धि से घरेलू उपभोग पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए, मुद्रास्फीति के प्रभाव का पता लगाने के लिए हमें परिवार द्वारा प्रयोग की जा रही सभी वस्तुओं की कीमतों में बदलाव को ध्यान में रखना चाहिए। ऐसा करने के लिए, हम कीमतों के सामान्य स्तर में परिवर्तन खोजने की कोशिश करते हैं। इसलिए, मुद्रास्फीति को परिभाषित करने से पहले हमें कीमत स्तर और उसमें परिवर्तन के अर्थ को समझने की आवश्यकता है।

7.2 कीमत स्तर का मापन

हम किसी उत्पाद की 'कीमत' शब्द से परिचित हैं। 'कीमत स्तर' शब्द से हमारा क्या तात्पर्य है? दोनों के बीच क्या अंतर है? और हम कीमत स्तर को कैसे मापते हैं? ये कुछ ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर हम वर्तमान अनुच्छेद में देने का प्रयास करेंगे।

सरल शब्दों में कीमत को उस दर के रूप में परिभाषित किया जाता है जिस पर धन के लिए वस्तुओं और सेवाओं का आदान–प्रदान किया जाता है। यह एक मुद्रा अर्थव्यवस्था में एक वस्तु (या सेवाओं) की एक इकाई को बेचने या खरीदने के लिए भुगतान की गई धनराशि है।

कीमत स्तर शब्द एक समग्र अवधारणा है। यह विभिन्न वस्तुओं और सेवाओं की कीमत से संबंधित है। देखें कि हम किसी एक वस्तु की कीमत का उल्लेख नहीं करते हैं, बल्कि एक सामान और सेवाओं के समूह के रूप में करते हैं। इसलिए, जब हम कीमत स्तर में बदलाव की बात करते हैं तो यह हमेशा वस्तुओं के एक समूह के संदर्भ में होती है। चूंकि वस्तुओं की कीमतें भिन्न होती हैं, इसलिए वस्तुओं के समूह के कीमत स्तर में बदलाव को मापने के लिए, सूचकांकों का उपयोग करना आवश्यक है। विशेषरूप से, हमें कीमत सूचकांक का उपयोग करना होगा। आइए हम सूचकांक के विचार को प्राथमिक रूप में समझ लें।

7.2.1 सूचकांक की परिभाषा

एक सूचकांक एक अवधारणा है जो हमें दो या अधिक समय अवधि में अलग–अलग, लेकिन संबंधित, चर के समूह में परिवर्तनों की तुलना करने में सक्षम बनाती है। एक कीमत सूचकांक का उपयोग वस्तुओं के एक समूह की कीमतों के सामान्य स्तर में

परिवर्तन की तुलना करने के लिए किया जाता है। आमतौर पर एक कीमत सूचकांक समय के साथ प्राप्त कीमतों में परिवर्तन को संदर्भित करता है।

एक विशेष अवधि (जिसे 'आधार अवधि'कहा जाता है) को 100 के बराबर माना जाता है और अन्य अवधियों के लिए कीमत स्तर इस आधार के सापेक्ष व्यक्त किए जाते हैं।

उदाहरण के लिए, जब हम कहते हैं, थोक कीमत सूचकांक पिछले साल की तुलना में इस वर्ष बढ़ गया है, हम आधार या संदर्भ के रूप में पिछले वर्ष के कीमत स्तर पर ले जा रहे हैं, संदर्भ बिंदु = 100। इस के सन्दर्भ में हम इस वर्ष कीमत स्तर के परिवर्तन को मापते हैं।

किसी एक वस्तु का कीमत सापेक्ष आधार अवधि में उसकी कीमत से वर्तमान कीमत का अनुपात है। किसी दी गई वस्तु के लिए सबसे सरल कीमत सूचकांक इस रूप में व्यक्त किया जा सकता है :

$$I_{t,o} = 100\ (p_t / p_o) \qquad \ldots\ (7.1)$$

जहां p_t और p_o क्रमशः मौजूदा समय में 't' और आधार अवधि '0' पर कीमतों को दर्शाते हैं। उदाहरण के लिए, यदि एक किलो आलू की कीमत 2017 में 8 रुपये से 2018 में 10 रुपये हो जाती है, तो इस मामले में कीमत सूचकांक होगाः

$$I_{2017,2018} = 100\ (10/8) = 125 \qquad \ldots(7.2)$$

यह सूचकांक वर्ष के दौरान एक किलो आलू की कीमत में 25 प्रतिशत की वृद्धि दर्शाताहै। दूसरे शब्दों में, पुराने स्तर पर आलू का उपभोग को बनाए रखने के लिए आपको 25 प्रतिशत अधिक धन की आवश्यकता है।

7.2.2 सूचकांकों के प्रकार

सूचकांक विभिन्न प्रकार के हो सकते है, जो इस के उद्देश्य और रचनाविधि पर निर्भर करते हैं। जहां तक कीमत सूचकांक का संबंध है, दो मुख्य प्रकार के कीमत सूचकांक हैंः अर्थात, थोक कीमत सूचकांक (डब्ल्यूपीआई) और उपभोक्ता कीमत सूचकांक (सीपीआई)। दोनों मूल्य सूचकांकों में i) वस्तुओं और सेवाओं को शामिल करने के मामले में अलग–अलग हैं, ii) वस्तुओं और सेवाओं की प्रत्येक श्रेणी को दिए गए भार, और iii) कीमतों (चाह थोक या खुदरा) को ध्यान में रखा जाए।

सभी वस्तुओं और सेवाओं (समय और संसाधन की कमी के कारण) पर विचार करना संभव नहीं है, सूचकांक एक प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आधार पर अनुमानित की जाती है। दो कीमत सूचकांकों का संख्यात्मक मान सूचकांक के निर्माण में शामिल वस्तुओं, प्रत्येक वस्तु भार और मूल्य सूचकांक के आधार वर्ष के अनुसार पर अलग–अलग होगा। इस प्रकार दो कीमत सूचकांकों की तुलना करते समय हमें उपरोक्त कारकों को ध्यान में रखना चाहिए। हम बाद में 'अर्थशास्त्र के लिए सांख्यिकीय तरीके' पाठ्यक्रम में विस्तार से सूचकांक के बारे में चर्चा करेंगे।

थोक कीमत सूचकांक (WPI)

थोक कीमत सूचकांक थोक वस्तुओं के प्रतिनिधि वस्तु समूह की कीमत है। यह सूचकांक थोक बाजार में वस्तुओं और सेवाओं की कीमत में बदलाव को मापता है। भारत में थोक कीमत सूचकांक को भारत सरकार के वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय के उद्योग और

आंतरिक व्यापार संवर्धन विभाग के आर्थिक सलाहकार के कार्यालय द्वारा प्रकाशित किया जाता है।

घरेलू बाजार में थोक बिक्री के पहले बिंदु पर आंकड़े एकत्र किये जाते है। उपयोग की जाने वाली कीमतें प्राथमिक वस्तुओं के लिए थोक कीमत, ईंधन की वस्तुओं के लिए प्रशासकीय कीमतें और निर्मित उत्पादों के लिए कारखानो से निकाली गई वस्तुओं की कीमतें हैं'। थोक कीमत सूचकांक का एक फायदा यह है कि इसका जो जनवरी 1942 में शुरू एक लंबा इतिहास है, तथा यह मुद्रास्फीति में दीर्घकालिक रुझानों का आकलन करने के लिए उपयोगी है। थोक कीमत सूचकांक कच्चे माल से लेकर तैयार विनिर्माण तक माल की एक विस्तृत श्रृंखला को भी सम्मिलित करता है।

थोक कीमत सूचकांक की एक प्रमुख सीमा यह है कि यह सेवा क्षेत्र को शामिल नहीं करता जिसका सकल घरेलू उत्पाद में बड़ा योगदान है।

उपभोक्ता कीमत सूचकांक (CPI)

उपभोक्ता कीमत सूचकांक सामान और सेवाओं के सामान्य कीमत स्तर में समय के साथ बदलाव का मापन करता है जो घरों में उपभोग के उद्देश्यों के लिए प्राप्त किए जाते हैं। भारत में उपभोक्ता कीमत सूचकांक का व्यापक रूप से उपयोग इन कार्यों हेतु किया जाता है i) मुद्रास्फीति का एक वृहद आर्थिक संकेतक, ii) भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण के लिए एक उपकरण के रूप में, iii) कर्मचारियों के महंगाई भत्ते के सूचकांक के लिए, सरकार द्वारा कीमत स्थिरता की निगरानी के लिए, और iv) राष्ट्रीय आय खातों के लिए अपस्फायक के रूप में। उपभोक्ता कीमत सूचकांक का प्रकाशन केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय (CSO), भारत सरकार द्वारा किया जाता है। आपने अखबारों और विभिन्न रिपोर्टों में 'शीर्षक मुद्रास्फीति' के बारे में देखा होगा। यह व्यापक उपभोक्ता कीमत सूचकांक के आधार पर मुद्रास्फीति को संदर्भित करता है।

बोध प्रश्न – 1

1) यदि कोई देश मुद्रास्फीति का सामना कर रहा है, तो मौद्रिक राष्ट्रीय उत्पाद में परिवर्तन होगा। यह

   क) मुद्रास्फीति की दर की तुलना में तेजी से गिरेगा

   ख) वास्तविक राष्ट्रीय उत्पाद में परिवर्तन के बराबर रहेगा

   ग) राष्ट्रीय आय के मूल्य का न्यूनांकन करेगा

   घ) उत्पादन के वास्तविक मूल्य में परिवर्तन का अधि–अंकन करेगा

   .....

   .....

   .....

2) थोक कीमत सूचकांक और उपभोक्ता कीमत सूचकांक में भेद स्पष्ट करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

7.3 मुद्रास्फीति की परिभाषा

कीमतों और कीमत स्तर की पृष्ठभूमि के साथ हम मुद्रास्फीति की परिभाषा पर चलते हैं। हमने पहले उल्लेख किया है कि मुद्रास्फीति को निरंतर वृद्धि के रूप में परिभाषित किया जाता है अर्थात्, कीमतों के सामान्य स्तर में लगातार वृद्धि की ओर एक प्रवृत्ति के रूप में। विशेषण 'निरंतर' पर ध्यान दिया जाना चाहिए इसका कारण यह है कि यदि कीमत स्तर आज बढ़ जाता है लेकिन कल गिरता है तो यह मुद्रास्फीति नहीं हो सकता है, बल्कि यह कीमतों में केवल अल्पकालिक उतार–चढ़ाव है। 'सामान्य कीमत स्तर' शब्द भी महत्वपूर्ण है क्योंकि कुछ समय के दौरान कुछ वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि हुई है जबकि कुछ अन्य वास्तव में गिर सकती हैं। परिणामस्वरूप, कुल मिलाकर, इन कीमतों का औसत स्थिर रह सकता है या नीचे भी जा सकता है।

इसी प्रकार यदि वस्तुओं के एक समूह की कीमत, जो अर्थव्यवस्था के उत्पादन के कुल मूल्य के एक छोटे से अंश का गठन करती है, में वृद्धि का अर्थ मुद्रास्फीति के रूप में नहीं होना आवष्यक नहीं है। अर्थात्, ऐसी वस्तुओं की कीमतों में वृद्धि का प्रभाव बहुत कम हो सकता है कि सभी वस्तुओं के औसत कीमत स्तर को प्रभावित किया जा सके। इस प्रकार हम देखते हैं कि मुद्रास्फीति एक वृहद आर्थिक घटना है और इसका संबंध किसी विशेष वस्तु की कीमत में वृद्धि या वस्तुओं के एक छोटे समूह से नहीं है।

अनुच्छेद 7.1 में, यह इंगित किया गया था कि मुद्रास्फीति में कैसे निश्चित धन आय वाले एक परिवार को प्रभावित करने की संभावना है। हालांकि, कई मामलों में, कुछ आय वर्ग वास्तव में मुद्रास्फीति से लाभान्वित होते हैं या कम से कम इस से अप्रभावित रह सकते हैं। हम अगली इकाई में मुद्रास्फीति के कारणों और प्रभावों पर चर्चा करेंगे।

7.4 मुद्रास्फीति के प्रकार

मुद्रास्फीति की गंभीरता या, कीमतों में तेजी की दर के आधार पर हम मुद्रास्फीति को तीन अलग–अलग प्रकारों में विभाजित कर सकते हैं, जैसे, मध्यम, सरपट और अति–मुद्रास्फीति इसके अलावा, कुछ अन्य संबंधित अवधारणाएं हैं जिन के बारे में हम नीचे चर्चा करते हैं।

7.4.1 मध्यम मुद्रास्फीति

जब सामान्य कीमत स्तर धीरे–धीरे लेकिन निरंतर रूप से बढ़ता है, तो इसे मध्यम मुद्रास्फीति के रूप में जाना जाता है। भारत के मामले में, मौद्रिक नीति समिति (MPC) प्रतिवर्ष 4 प्रतिशत की दर से मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण का समर्थन करती है। लक्ष्य के अनुसार मुद्रास्फीति की दर प्रति वर्ष 2 से 6 प्रतिशत की सीमा के बाहर नहीं होनी चाहिए।

7.4.2 तीव्र मुद्रास्फीति

निरंतर सामान्य कीमत स्तर में वृद्धि की उच्च दर को तीव्र मुद्रास्फीति के रूप में जाना जाता है। मुद्रास्फीति की दर दो अंकों (20 प्रतिशत, 40 प्रतिशत, आदि) में और कभी–कभी तीन अंकों (यानी, 200 प्रतिशत) के रूप में उच्च हो सकती है। ब्राजील और अर्जेंटीना जैसे कुछ लैटिन अमेरिकी देशों ने 1970 के दशक में मुद्रास्फीति की दर 100 प्रतिशत से अधिक अनुभव की थी।

7.4.3 अति मुद्रास्फीति

अति –मुद्रास्फीति एक ऐसी स्थिति है जहां कीमत वृद्धि बहुत तेज होती है, ये तेजी से स्थानीय मुद्रा के वास्तविक मूल्य को मिटाती है, और निवासियों को स्थानीय धन के अपने

स्वामित्व को कम करने के लिए मजबूर करती है। आमतौर पर यह एक ऐसी अर्थव्यवस्था में होता है जो युद्धों और उनके बाद होने वाले सामाजिक–राजनीतिक उथल–पुथल या अन्य संकट का सामना कर रही हो। इन स्थितियों में सरकार द्वारा निवासियों पर कर लगाना बहुत मुश्किल होता है, जिसके कारण सरकार को घाटा होता है और सरकार को मुख्य रूप से कराधान या उधार लेने के बजाय इसे मुद्रा सृजन के माध्यम से पूरा करना पड़ता है।

इतिहास में ऐसे मामले सामने आए हैं जब एक–डेढ़ साल के भीतर कीमत सूचकांक 100 से 10,000,000,000 तक पहुंच गया! ऐसी स्थितियों में, मुद्रा मूल्य का भंडार होने के साथ–साथ विनिमय का माध्यम भी नहीं रह पाती।

विभिन्न देशों में अति मुद्रास्फीति के कई उदाहरण हैं। 1980 के दशक के दौरान ब्राज़ील में अति मुद्रास्फीति थी। 2008–09 के दौरान अति मुद्रास्फीति का एक ताजा उदाहरण जिम्बाब्वे है, जहां कीमतें एक दिन से अगले दिन तक लगभग दोगुनी हो गई हैं।

जनता अपने धन को अपने पास मुद्रा के रूप में रखने के बजाय उसे अपने भोजन और दूसरी आवश्यकताओं पर खर्च करती थी, क्योंकि पैसे का मूल्य तेजी से कम हो रहा था। कुछ रिपोर्टों के अनुसार, 2008 में मुद्रास्फीति की दर का अनुमान लगाना असंभव था – नवंबर 2008 में यह लगभग 79.6 बिलियन प्रतिशत थी। इसके परिणामस्वरूप, देश ने अपनी मुद्रा को त्याग दिया और 2009 में लेनदेन के लिए विदेशी मुद्राओं के उपयोग की अनुमति दी।

7.4.4 रुद्ध स्फीति (stagflation)

रुद्ध स्फीति शब्द उस स्थिति को संदर्भित करता है जहां एक अर्थव्यवस्था में वास्तविक उत्पादन बहुत धीमी गति से या शून्य दर (स्थिर) पर बढ़ता है और कीमतें बढ़ती रहती हैं। रुद्ध स्फीति के दुष्प्रभाव – कीमतों में वृद्धि या मुद्रास्फीति के साथ बेरोजगारी में प्रकट होते हैं । यह आर्थिक दुविधा को जन्म देता है क्योंकि कम मुद्रास्फीति के लिए तैयार किए गए कार्यों से बेरोजगारी और इसके विपरीत हो सकता है। यह 1970 के दशक के दौरान हुआ, जब कच्चे तेल की कीमतों में नाटकीय रूप से हुई वृद्धि ने विकसित अर्थव्यवस्थाओं में तेज मुद्रास्फीति को बढ़ावा दिया।

7.4.5 अवस्फीति

अवस्फीति एक ऐसी स्थिति है जहां कीमतें लगातार गिरती हैं या उनमें गिरने की प्रवृत्ति होती है। यह तब उत्पन्न हो सकती है जब कुल मांग कुल आपूर्ति से कम हो। इस प्रकार, अवस्फीति उत्पादन में कमी, बेरोजगारी में वृद्धि और आर्थिक गतिविधियों के सामान्य धीमा होने की विशेषता है। पूंजीवादी देशों में 1929 से 1933 तक का महामंदी एक तीव्र अवस्फीति का उदाहरण है जब कीमतें अचानक से गिर गईं, बेरोजगारी बहुत उच्च स्तर तक बढ़ गई और इन देशों की सकल घरेलू उत्पाद तेजी से गिर गई। अर्थशास्त्रियों का आमतौर पर मानना है कि आधुनिक अर्थव्यवस्था में अवस्फीति खतरनाक है क्योंकि यह ऋण के वास्तविक कीमत को बढ़ा सकती है, खासकर अगर अवस्फीति अप्रत्याशित हो। इसके अलावा, अवस्फीति अर्थव्यवस्था में उत्पादन को हतोत्साहित करती है क्योंकि कीमतें गिरती रहती हैं।

7.4.6 मूलभूत मुद्रास्फीति

अस्थायी कीमत अस्थिरता को हटाने के बाद मुद्रास्फीति के माप को 'मूलभूत मुद्रास्फीति' के रूप में जाना जाता है। यदि अस्थायी उच्चावचन का ध्यान रखा जाता है, तो वे अनुमानित समग्र मुद्रास्फीति अंको को प्रभावित कर सकते हैं। ये वास्तविक मुद्रास्फीति संख्या के साथ मेल नहीं खा पाएगा। इस संभावना को खत्म करने के लिए, मूलभूत

मुद्रास्फीति को अस्थायी झटके और अस्थिरता को हटाकर वास्तविक मुद्रास्फीति का आकलन करने के लिए उपयुक्त माना जाता है।

भारत में मुख्य मुद्रास्फीति की गणना खाद्य उत्पादों को छोड़कर निर्मित उत्पादों की कीमत वृद्धि के आधार पर की जाती है। इस प्रकार इसमें कृषि वस्तु, ईंधन और ऊर्जा, खाद्य उत्पाद आदि शामिल नहीं हैं।

बोध प्रश्न – 2

1) आधार वर्ष के बाद के वर्षों में कीमत सूचकांकः
   क) कभी 100 नहीं होता।
   ख) हमेशा 100 से अधिक रहता है।
   ग) हमेशा 100 से कम रहता है।
   घ) 100 से कम, अधिक या इसके बराबर हो सकता है।

   .....

   .....

2) 2017 में उपभोक्ता मूल्य सूचकांक 111.5 था और 2018 में 114.1 था। महंगाई दर है।
   क) 2.3%
   ख) 2.6%
   ग) 112.8
   घ) अपर्याप्त जानकारी

   .....

   .....

7.5 सार–संक्षेप

मुद्रास्फीति में कीमत स्तर लगातार बढ़ता है। जब कीमत स्तर में वृद्धि होती है, तो धन की क्रय शक्ति में गिरावट आती है। कीमत स्तर में बदलाव को मापने के लिए हम कीमत सूचकांक की मदद लेते हैं। एक सूचकांक अलग–अलग, लेकिन संबंधित, दो या अधिक समय अवधि में चर के समूह की तुलना करने के लिए एक उपकरण है। कीमत सूचकांक मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं, थोक कीमत सूचकांक और उपभोक्ता कीमत सूचकांक।

अवस्फीति का अर्थ है कीमत स्तर में लगातार गिरावट। अति–मुद्रास्फीति बहुत अधिक मुद्रास्फीति की स्थिति है, जो युद्ध के बाद या किसी अर्थव्यवस्था में गंभीर आर्थिक संकट के कारण उत्पन्न हो सकती है। अति मुद्रास्फीति के दौरान मुद्रास्फीति की अधिकांश लागतों की गंभीरता बढ़ जाती है। आमतौर पर अति मुद्रास्फीति के साथ अर्थव्यवस्था में वास्तविक आय की वृद्धि में ठहराव की स्थिति को रुद्ध स्फीति कहा जाता है। मूलभूत मुद्रास्फीति एक मुद्रास्फीति माप है जो कुछ वस्तुओं जैसे खाद्य पदार्थों, ऊर्जा उत्पाद आदि के मामले में कीमत उच्चावचन को शामिल नहीं करता है।

7.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1) घ)
2) उप–भाग 7.4.3 और 7.4.4 का अध्ययन करें और उत्तर लिखें।

बोध प्रश्न 2

1) घ)

2) क)

3) उप–भागों 7.3.1 और 7.3.2 का अध्ययन करें और उत्तर लिखें।

4) उप– भाग 7.3.3 का अध्ययन करें और उत्तर लिखें।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

इकाई 8 मुद्रास्फीति के कारण और प्रभाव*

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 विषय प्रवेश

8.2 मुद्रास्फीति के कारण

- 8.2.1 मांग–जनित मुद्रास्फीति
- 8.2.2 आपूर्ति–जनित मुद्रास्फीति
- 8.2.3 मुद्रा के परिमाण का सिद्धांत
- 8.2.4 मुद्रास्फीति का संरचनात्मक सिद्धांत

8.3 मुद्रास्फीति के प्रभाव

- 8.3.1 देनदार और लेनदार
- 8.3.2 निश्चित आय समूह
- 8.3.3 व्यापारी और निवेशक
- 8.3.4 कृषक
- 8.3.5 सरकार

8.4 अवस्फीति (dis-inflation) की कीमत

8.5 सार–संक्षेप

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

8.0 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप इस स्थिति में होंगे कि

- मुद्रास्फीति के प्रमुख कारणों की व्याख्या कर सकें;
- मांग जनित मुद्रास्फीति और आपूर्ति जनित मुद्रास्फीति के बीच अंतर कर सकें;
- मुद्रा के परिमाण सिद्धांत और मुद्रास्फीति के संरचनात्मक सिद्धांत की व्याख्या कर पाएं; तथा
- विभिन्न वर्गों पर मुद्रास्फीति के प्रभाव की व्याख्या कर पाएं।

8.1 विषय प्रवेश

पिछली इकाई में हमने मुद्रास्फीति की अवधारणा और प्रकारों के बारे में बताया। इस इकाई में हम मुद्रास्फीति के कारणों और प्रभावों पर चर्चा करेंगे। नोबेल पुरस्कार विजेता मिल्टन फ्रीडमैन के अनुसार, "मुद्रास्फीति हमेशा और हर जगह मौद्रिक घटना ही होती है"।

* डॉ० गुरलीन कौर, सहायक प्राध्यापक, श्री गुरू गोविंद सिंह कॉलेज ऑफ कॉमर्स, दिल्ली विश्वविद्यालय

इससे उनका आशय यह था कि जब काफी समय तक, मुद्रा की आपूर्ति आर्थिक संवृद्धि से अधिक बनी रहती है तो मुद्रास्फीति होती है। मुद्रावादी मुद्रास्फीति को "too much money chasing too few goods" मानते हैं। मुद्रा आपूर्ति के अलावा कई अन्य कारक हैं जो मुद्रास्फीति का कारण बनते हैं। इसके अलावा, जैसा कि हम नीचे चर्चा करेंगे, मुद्रास्फीति समाज के विभिन्न वर्गो को अलग तरह से प्रभावित करती है।

8.2 मुद्रास्फीति के कारण

मुद्रास्फीति के अंतर्निहित कारणों को आम तौर पर उस स्रोत के रूप में बताया जाता है जिसके माध्यम से मुद्रास्फीति उत्पन्न होती है। आपने व्यष्टि अर्थशास्त्र से सीखा है कि वस्तु की कीमत उस स्तर पर निर्धारित की जाती है जहां आपूर्ति मांग के बराबर होती है। यदि मांग अधिक आपूर्ति से होती है तो कीमत में वृद्धि होती है। दूसरी ओर, यदि आपूर्ति मांग से अधिक है, तो कीमत कम हो जाएगी। दोनों तरह की स्थिति में कीमत का समायोजन होता है। हालांकि, एक मामले में परिवर्तन का स्रोत मांग पक्ष से उत्पन्न होता है जबकि दूसरे मामले में आपूर्ति पक्ष से उत्पन्न होता है। इसी तरह की प्रक्रिया कुल मांग और कुल आपूर्ति के मामले में भी लागू होती है। प्रारंभिक प्रक्रिया के आधार पर, हम मुद्रास्फीति को दो प्रकारों में वर्गीकृत करते हैं, अर्थात

(i) मांग–जनित या मांग–पक्ष मुद्रास्फीति, और
(ii) लागत–प्रेरित या आपूर्ति–पक्ष मुद्रास्फीति।

8.2.1 मांग–जनित मुद्रास्फीति

जो कारक कुल मांग में वृद्धि करते हैं, (जबकि कुल आपूर्ति में कोई वृद्धि नहीं होती है), मांग–पक्ष या मांग–जनित मुद्रास्फीति का कारण बन सकते है। केन्जिय दृष्टिकोण के अनुसार, मांग–जनित मुद्रास्फीति तब होती है, जब कुल मांग उत्पादन के पूर्ण रोजगार स्तर पर कुल आपूर्ति से अधिक हो जाती है, जिससे कुल मांग (C + I + G) और उत्पादन के पूर्ण रोजगार स्तर के बीच संबद्ध को मुद्रास्फीति का कारण माना जाता है। (i) उपभोग में वृद्धि (आय में वृद्धि, बचत में कमी या कर की दर में कमी), (ii) निवेश (ब्याज दर में कमी के कारण) होने पर कुल मांग में वृद्धि होगी। व्यापार भावनाओं में आशावाद), और (iii) सरकारी व्यय में वृद्धि। याद रखें कि कीनेसियन फ्रेमवर्क में समग्र आपूर्ति वक्र शुरू में क्षैतिज, फिर ऊपर की ओर उठता हुआ, और फिर चर्चा के तहत समय अवधि के आधार पर ऊर्ध्वाधर है (रेखाचित्र 8.1 में LRAS)।

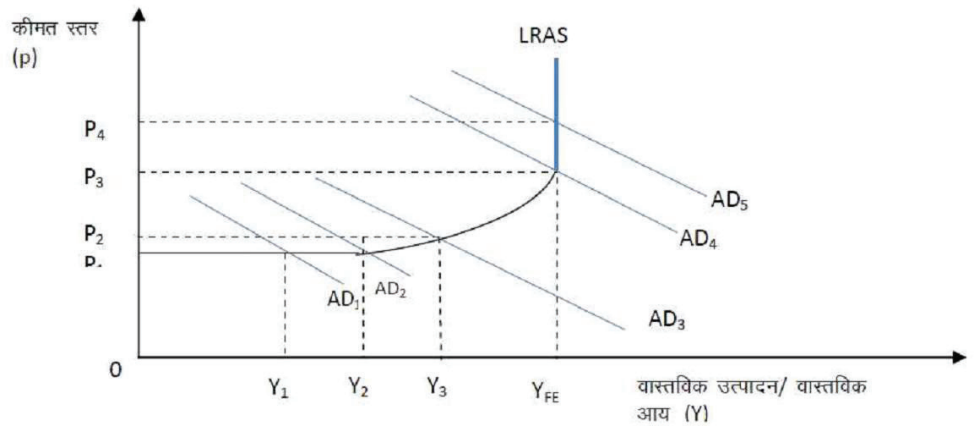

रेखाचित्र 8.1 मांग जनित मुद्रास्फीति

आइए हम मानते हैं कि कुल मांग का वर्तमान स्तर AD_1 है। संतुलन कीमत स्तर P_1 है और वास्तविक उत्पादन का स्तर Y_1 है। जैसा कि आप आरेख 8.1 से देख सकते हैं, उत्पादन स्तर Y_1 पर, उत्पादन क्षमता का उपयोग कम है। दूसरे शब्दों में, अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार स्तर Y_{FE} से नीचे चल रही है। इस स्थिति में कुल मांग (AD1 से AD2 तक) में वृद्धि (उदाहरण के लिए, सरकारी खर्च में वृद्धि के कारण) से वास्तविक उत्पादन (Y_1 से Y_2 तक) में वृद्धि होगी। आपको ध्यान देना चाहिए कि इस स्थिति में कीमतों में कोई वृद्धि नहीं होती है क्योंकि आपूर्ति वक्र असीम रूप से लोचदार है (रेखाचित्र 8.1 में LR वक्र का क्षैतिज भाग)।

सरकारी खर्चों में और बढ़ोतरी से उत्पादन और कीमतों में बढ़ोतरी होगी। AD वक्र में AD2 से AD3 तक बदलाव से वास्तविक उत्पादन Y2 से Y3 तक बढ़ेगा। लेकिन कीमत स्तर भी बढ़ जाएगा (P1 से P2 तक)। ऐसा इसलिए है क्योंकि निर्माता मौजूदा कीमत P1 पर अधिक आपूर्ति करने के लिए तैयार नहीं हैं; वे उत्पादन Y3 की आपूर्ति केवल उच्च कीमत पर करने के लिए तैयार हैं, अर्थात P2। यदि AD में AD3 से AD4 तक वृद्धि होती है तो परिणाम समान है। इस स्तर पर, अर्थव्यवस्था उत्पादन के पूर्ण रोजगार स्तर (Y_{FE}) के करीब पहुंच रही है; कुछ उत्पादन इकाइयों में कुछ अतिरिक्त क्षमता होती है, लेकिन अन्य उत्पादन इकाइयां पूर्ण क्षमता पर चल रही होती हैं। ऐसी स्थिति के तहत कुल मांग में वृद्धि से कुछ उद्योगों में कीमत वृद्धि होगी, और इसलिए जब AD बढ़ती है तो औसत कीमत स्तर में वृद्धि होगी। आगे, जब अर्थव्यवस्था पूर्ण रोजगार उत्पादन पर होती है, तो AD में वृद्धि (AD4 से AD5 तक), उत्पादन के स्तर में किसी भी वृद्धि के बिना कीमत वृद्धि ही होगी।

8.2.2 आपूर्ति–पक्ष मुद्रास्फीति

आपूर्ति–जनित मुद्रास्फीति का कीनेसियन सिद्धांत आपूर्ति–पक्ष कारकों जैसे कि मजदूरी दर में वृद्धि या कच्चे माल की कीमतों में अप्रत्याशित वृद्धि को मुद्रास्फीति का मूल कारण मानता हैं। कीमत–जनित मुद्रास्फीति को आमतौर पर मजदूरी मुद्रास्फीति प्रक्रिया के रूप में माना जाता है क्योंकि मजदूरी उत्पादन की कुल कीमत का एक बड़ा हिस्सा है। शक्तिशाली और लड़ाकू ट्रेड यूनियन अक्सर उच्च मजदूरी के लिए सौदेबाजी करती हैं। यदि मजदूरी दर में वृद्धि श्रम की उत्पादकता में वृद्धि दर के समान है, तो उत्पादन की औसत कीमत में वृद्धि नहीं होती है। यदि ट्रेड यूनियन उत्पादकता वृद्धि से मेल नहीं खाती, उच्च मजदूरी वृद्धि पर बातचीत करने में सफल होती हैं, तो उत्पादन की कीमत बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति उत्पादकों को उनके द्वारा उत्पादित वस्तुओं और सेवाओं की कीमतों को बढ़ाने के लिए मजबूर करती है। इस तरह की मुद्रास्फीति को मज़दूरी–जनित मुद्रास्फीति के रूप में जाना जाता है। मज़दूरी–जनित मुद्रास्फीति के लिए एक पूर्व–आवश्यकता श्रम का संघ बद्ध होना है।

अर्थव्यवस्था में मुद्रास्फीति का सामना करने वाले श्रमिक, अक्सर मजदूरी दर में वृद्धि की मांग करते हैं। निर्माता अक्सर ऐसी मांगों का अनुपालन करते हैं। जैसे–जैसे उत्पादन की कीमत बढ़ती है, कंपनियां उत्पाद की कीमतें बढ़ाती हैं। इसके अलावा, कंपनियां इसलिए भी अपने उत्पादों की कीमत बढ़ाती हैं ताकि उन्हें अधिक लाभ हो सके।

जब वस्तुओं और सेवाओं की कीमतें बढ़ जाती हैं, तो श्रमिक कीमत वृद्धि की भरपाई के लिए उच्च मजदूरी की मांग करते हैं। इस प्रक्रिया में, मजदूरी दर और कीमतों में वृद्धि की एक श्रृंखला बन जाती है। इस तरह की स्थिति एक मजदूरी–कीमत कुंतल पेचदार की ओर ले जाती है। कीमतें बढ़ाने के लिए फर्मों के लिए एक पूर्व–आवश्यकता बाजार की अपूर्णता है। कई प्रतिस्पर्धियों वाले बाजार में, एक फर्म के पास कीमतें बढ़ाने की गुंजाइश सीमित रह जाती है।

मान लीजिए कि AD कुल मांग वक्र है और AS1 कुल आपूर्ति वक्र है। इस प्रकार, अर्थव्यवस्था संतुलन उत्पादन Y1 और संतुलन कीमत स्तर P1 (रेखाचित्र 8.2 देखें) पर कार्य करती है। मान लीजिए कि उत्पादन की कीमत में वृद्धि के कारण AS1 से AS2 तक कुल आपूर्ति वक्र में बदलाव आता है। AS वक्र में बदलाव यह दर्शाता है कि समान स्तर की आपूर्ति अब केवल उच्च कीमत पर की जा सकती है। नया संतुलन बिंदु E′ है जिसमें संतुलन उत्पादन Y2 और संतुलन कीमत स्तर P2 है। ध्यान दें, इस मामले में, उत्पादन में गिरावट और कीमत स्तर में वृद्धि होती है।

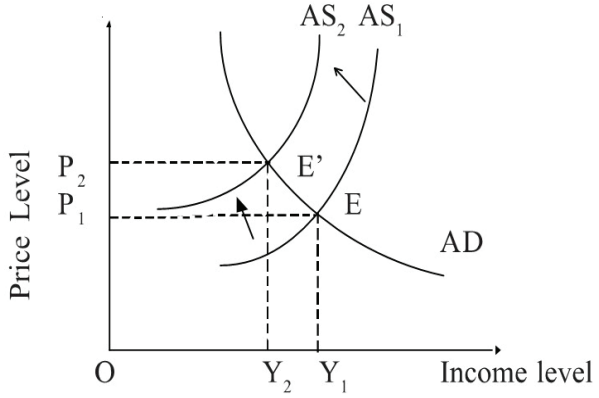

रेखाचित्र 8.2: लागत–प्रेरित मुद्रास्फीति

8.2.3 मुद्रा का परिमाण सिद्धांत

ऊपर चर्चा कीनेसियन अर्थशास्त्रियों द्वारा की गई व्याख्या को दर्शाती है। हालांकि मुद्रावादी दृष्टिकोण केनेसियन स्पष्टीकरण से अलग है। मुद्रावादी मुद्रास्फीति के कारणों को समझाने के लिए 'मुद्रा–परिमाण सिद्धांत' (BECC 103 की इकाई 5 में चर्चा की गई है) का उपयोग करते हैं। मुद्रा के परिमाण सिद्धांत में उपयोग किए गए 'विनिमय के समीकरण' को याद करें।

$MV = PY$

जहां परः

M = अर्थव्यवस्था में संचलन में मुद्रा की परिमाण

Y = वास्तविक राष्ट्रीय आय

P = कीमत स्तर

V = संचलन का वेग, वह गति जिस पर मुद्रा अर्थव्यवस्था में परिचालित होती हैं।

मुद्रा का परिमाण सिद्धांत दो मान्यताओं पर आधारित है, अर्थात (i) मुद्रा 'तटस्थ' है, और (ii) संचलन का वेग (V) किसी भी स्थिति के लिए स्थिर है। बाजार की द्वंद्वात्मकता के आधार पर मुद्रा की तटस्थता का तात्पर्य यह है कि मुद्रा की आपूर्ति में परिवर्तन उत्पादन के स्तर को प्रभावित नहीं करते हैं। मुद्रवादिओं का तर्क है कि उत्पादन (Y) एक वास्तविक चर है, जो केवल वास्तविक कारकों द्वारा संचालित होता है। सकल उत्पादन (Y) स्थिर है (AS वक्र लंबवत (vertical) है) क्योंकि अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार है। मजदूरी दर और कीमतों में लचीलेपन के माध्यम से पूर्ण रोजगार बनाए रखा जाता है।

मौद्रिक नीति कैसे काम करती है? इस स्पष्टीकरण को सरल बनाने के लिए विनिमय के समीकरण का उपयोग किया जाता है। विनिमय के समीकरण के दो पहलू हमेशा संतुलन में होने चाहिए। यदि V स्थिर है और Y को M में वृद्धि से नहीं बदला जा सकता है, तो समीकरण का एकमात्र भाग जिसे M में वृद्धि से बदला जा सकता है। वह P है। अगर सेंट्रल बैंक ने M को बढ़ाने के लिए मुद्रा की आपूर्ति में वृद्धि की तो, इसका परिणाम P में आनुपातिक वृद्धि होना है। मुद्रा और कीमतों के बीच लंबे समय तक चली प्रवृत्तियां, मुद्रावादी दृष्टिकोण का समर्थन करती हैं कि मुद्रा की आपूर्ति के विस्तार से मुद्रास्फीति उच्च हो सकती है, और मुद्रा आपूर्ति के उचित विनियमन द्वारा मुद्रास्फीति को रोका जा सकता है। ।

8.2.4 मुद्रास्फीति का संरचनात्मक सिद्धांत

मुद्रास्फीति का संरचनात्मक सिद्धांत, जैसा कि मिर्डल, स्ट्रीटन और कई अन्य लैटिन अमेरिकी अर्थशास्त्रियों द्वारा विकसित किया गया है, आमतौर पर संवृद्धिशील अर्थव्यवस्थाओं में पाए जाने वाले संरचनात्मक कारकों या संरचनात्मक कठोरता को मुद्रास्फीति की घटना का श्रेय देता है। संरचनात्मक सिद्धांत संसाधन अंतर को संदर्भित करता है (यानी, बचत निवेश से कम है), भोजन की कमी (वर्षा पर कृषि की निर्भरता के कारण), विदेशी मुद्रा की कमी और खराब ढांचागत सुविधाएं)। मुद्रास्फीति के संरचनात्मक सिद्धांत के अनुसार ये सभी संरचनात्मक कारक, संवृद्धिशील देशों में मुद्रास्फीति के वास्तविक कारण हैं।

1970 के दशक में संरचनात्मक सिद्धांत सामने आया था जब दुनिया में बढ़ती बेरोजगारी (गतिरोध) के साथ बढ़ती कीमतों की स्थिति का सामना हुआ था, कुछ ऐसा जो मांग–जनित सिद्धांतों से स्पष्ट नहीं हो सकता था। यह देखा गया कि 1970 के दशक में दो तेल कीमत के झटके, जो अनिवार्य रूप से आपूर्ति पक्ष के झटके थे (क्योंकि उन्होंने उत्पादन की कीमत में वृद्धि की थी), ऐसी स्थिति पैदा करने में सक्षम रहे थे। संरचनात्मक अर्थशास्त्री, अपनी ओर से तर्क देते हैं कि कम विकसित देशों में, मुद्रा के अलावा, आपूर्ति और मांग की स्थिति जैसे संरचनात्मक कारक भी कीमत निर्धारित करने में समान रूप से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। मुद्रा के विस्तार के माध्यम से सार्वजनिक निवेश के वित्तपोषण से उत्पादक क्षमता और वास्तविक उत्पादन में वृद्धि होती है, जबकि वास्तविक उत्पादन, एक ही समय में, मुद्रा की मांग को भी बढ़ाता है। इसके अलावा, सरकार के वास्तविक सार्वजनिक व्यय के एक वांछित स्तर को बनाए रखने की चिंता के कारण सरकार के नामिक खर्च में वृद्धि होती है जिससे कीमतों में और आगे वृद्धि होती है।

यद्यपि इस विचार की आलोचना हुई है, हमें वस्तुओं और सेवाओं की आपूर्ति के महत्व से इनकार नहीं करना चाहिए। उदाहरण के लिए अनुसंधान और संवृद्धि को प्रोत्साहित करके उत्पादकता बढ़ाने के लिए सरकार का हस्तक्षेप, लंबी अवधि में मुद्रास्फीति का मुकाबला करने में अच्छा योगदान दे सकता है।

बोध प्रश्न – 1

1) निम्नलिखित मिलान करें:

1.	मुद्रास्फीति	क	जब अधिक मांग के कारण मुद्रास्फीति होती है
2.	अति मुद्रास्फीति	ख	औसत कीमत स्तर में निरंतर वृद्धि
3.	मांग–जनित मुद्रास्फीति	ग	मुद्रास्फीति उत्पादन कीमत में वृद्धि के कारण मुद्रास्फीति
4.	कीमत– जनित मुद्रास्फीति	घ	कीमत स्तर में तेजी से वृद्धि

.....

.....

.....

.....

2) तेल की कीमतों में वृद्धि, जैसे कि 1970 के दशक में तेल के झटके, ———— को जन्म देते हैं, जिससे ———— पैदा होता है।

क) AS वक्र पर चलन; कीमत – बढ़ोत्तरी मुद्रास्फ़ीति

ख) AS वक्र में एक बाईं ओर बदलाव; प्रेरित मुद्रा स्फीति की मांग

ग) AS वक्र में एक दायीं ओर बदलाव; लागत – प्रेरित मुद्रास्फ़ीति

घ) AS वक्र में एक बाईं ओर बदलाव; कीमत – प्रेरित मुद्रास्फ़ीति

.....

.....

3) मांग–जनित और कीमत–जनित मुद्रास्फीति के बीच भेद स्पष्ट करें।

.....

.....

.....

.....

8.3 मुद्रास्फीति का प्रभाव

मुद्रास्फीति मुद्रा के कीमत को कम करती है जिससे क्रय शक्ति का क्षरण होता है। यदि किसी व्यक्ति की नाममात्र आय मुद्रास्फीति की दर से अधिक दर से बढ़ रही है, तो उसकी वास्तविक आय (यानी, कीमत स्तर से विभाजित नाममात्र आय) बढ़ जाएगी। दूसरी ओर, यदि किसी व्यक्ति की नाममात्र आय मुद्रास्फीति की दर से कम दर पर बढ़ रही है, तो उसकी वास्तविक आय घट रही है।

मोटे तौर पर, हर समाज में दो आर्थिक समूह होते हैं, निश्चित आय समूह और परिवर्तनीय आय समूह। निश्चित आय समूह आमतौर पर मुद्रास्फीति के साथ अपनी वास्तविक आय में गिरावट से पीड़ित होता है। दूसरी ओर, परिवर्तनीय आय वाले लोग जैसे उद्योगपति, व्यापारी, अचल संपत्ति धारक और सट्टेबाजों को बढ़ती कीमतों के दौरान लाभ हो सकता है। सामान्यतया, मुद्रास्फीति से समाज का कौन सा आय वर्ग लाभ या हानि प्राप्त करता है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि कौन मुद्रास्फीति का अनुमान लगाता है और कौन नहीं। जो लोग मुद्रास्फीति का सही अनुमान लगाते हैं, वे अपनी वर्तमान आय, उधार और उधार गतिविधियों को तदनुसार समायोजित कर सकते हैं।

कुछ लोगों को, (मुख्य रूप से गरीब पृष्ठभूमि से,) नकदी रखने की आदत है; यहां तक कि वे इसे उच्च मुद्रास्फीति के दौरान भी ऐसा ही करते हैं। मुद्रास्फीति के दौरान मुद्रा का कीमत कम हो जाता है; यह, नकदी रखने से जुड़ी कीमत है।

ऐसी सुविधा के लिए लागत को अक्सर 'मुद्रास्फीति कर' कहा जाता है। यह सरकार को दिया जाने वाला वास्तविक कानूनी कर नहीं है; बल्कि यह उच्च मुद्रास्फीति के समय नकदी रखने के लिए दंड को संदर्भित करता है। उदाहरण के लिए, मान लीजिए कि आपने नकद रु 1,000 में और मुद्रास्फीति की दर 10 प्रतिशत है। एक वर्ष के बाद, आपके पास रखी नकदी समान ही होगी (अर्थात, रु1000), जबकि मुद्रा की क्रय शक्ति में 10 प्रतिशत की कमी होगी (अर्थात, जो वस्तुएं रु100 में उपलब्ध हैं, उनकी कीमत एक साल बाद रु110 होगी)। इस प्रकार, आपके पास मौजूद नकदी की क्रय शक्ति आज की कीमतों में केवल 900 रह जाएगी।

यदि कोई निवेशक प्रतिभूतियों, अचल संपत्ति या अन्य परिसंपत्तियों को धारण कर रहा है, तो मुद्रास्फीति का प्रभाव नगण्य हो सकता है। हम समाज के विभिन्न क्षेत्रों पर मुद्रास्फीति के प्रभाव के नीचे चर्चा करते हैं।

8.3.1 देनदार और लेनदार

बढ़ती कीमतों के दौरान, देनदार (debtor) लाभ उठाते हैं और लेनदार (creditor) नुकसान जाते हैं। जब कीमतें बढ़ती हैं तो पैसे का कीमत गिर जाता है। हालांकि देनदार समान राशि वापस करते हैं, लेकिन वे वस्तुओं और सेवाओं (या वास्तविक मुद्रा) के मामले में कम भुगतान करते हैं।

ऐसा इसलिए है क्योंकि जब वे पैसे उधार लेते हैं तो पैसे का कीमत कम होता है। इस प्रकार, ऋण का बोझ कम हो जाता है और देनदार लाभ प्राप्त करते हैं।

दूसरी ओर, लेनदार नुकसान जाते हैं। हालाँकि उन्हें उसी मुद्रा की राशि वापस मिल जाती है जिसे उन्होंने उधार दिया था, वे वास्तविक रूप से कम प्राप्त करते हैं क्योंकि मुद्रा का कीमत गिर जाता है। इस प्रकार, मुद्रास्फीति लेनदारों की कीमत पर देनदारों के पक्ष में वास्तविक मुद्रा के पुनर्वितरण को लाती है।

8.3.2 निश्चित आय समूह

मुद्रास्फीति होने पर निश्चित वेतन वाले व्यक्ति नुकसान में रहते हैं। कारण यह है कि कीमतें बढ़ने पर समायोजित करने में उनका वेतन धीमा रहता है। श्रमिकों को उस गति के आधार पर लाभ या हानि हो सकती है जिसके साथ उनका वेतन बढ़ती कीमतों के लिए समायोजित होता है। यदि श्रमिक संघ मजबूत होते हैं, तो श्रमिक अपने वेतन को जीवन सूचकांक की कीमत से जोड़ सकते हैं। इस तरह, श्रमिक मुद्रास्फीति के दुष्प्रभावों

से खुद को बचाने में सक्षम हो सकते हैं। कर्मचारियों द्वारा वेतन बढ़ाने और कीमतों में वृद्धि के बीच अक्सर एक समय अंतराल होता है। इस प्रकार, श्रमिक कुछ न कुछ खो देते हैं क्योंकि जब तक मजदूरी में बढ़ोतरी होती है, तब तक जीवन सूचकांक की कीमत और बढ़ जाती है। इसके अलावा, अगर श्रमिकों ने एक निश्चित अवधि के लिए संविदात्मक मजदूरी में प्रवेश किया है, तो भी वे घाटे में रहते हैं क्योंकि अनुबंध की अवधि के दौरान कीमतें बढ़ती रहती हैं। कुल मिलाकर, वेतन पाने वाले कर्मचारी भी सफेदपोश श्रमिकों के समान स्थिति में हैं। हस्तांतरण भुगतान जैसे पेंशन, बेरोजगारी लाभ, सामाजिक सुरक्षा इत्यादि और ब्याज प्राप्त करने वाले पूर्व निर्धारित आय पर रहते हैं। ऐसे सभी व्यक्तियों के मुद्रास्फीति के दौरान नुकसान होता है क्योंकि उन्हें एक अवधि के लिए निश्चित भुगतान प्राप्त होता है, जबकि पैसे के कीमत में गिरावट जारी है।

8.3.3 व्यापारी और निवेशक

उत्पादक, व्यापारी और अचल संपत्ति धारकों को स्फीति के दौरान लाभ रहता है। उत्पादकों के मामले पर चर्चा करते हैं। कीमत वृद्धि से वस्तुओं के भंडार के मूल्य में भी उसी अनुपात में वृद्धि हो जाती है। इसलिए, उनकी बिक्री बढ़ने पर उनका मुनाफा बढ़ता है। यही हाल अल्पकाल में व्यापारियों का भी है। लेकिन उत्पादकों को दूसरे तरीके से अधिक लाभ प्राप्त होता है – लागतें उत्पादन कीमतों के समान अनुपात में नहीं बढ़ती हैं। इसका कारण यह है कि मजदूरी दर और कुछ कच्चे माल की कीमतें एक अंतराल के बाद ही बढ़ पाती हैं। स्यावर सम्पदा के मालिक मुद्रास्फीति के दौरान लाभान्वित होते हैं क्योंकि सामान्य संपत्ति की तुलना में भू–संपत्ति की कीमतें आमतौर पर तेजी से बढ़ती हैं।

8.3.4 कृषक

कृषक तीन प्रकार के होते हैं, जैसे, जमींदार, किसान मालिक, और भूमिहीन कृषि श्रमिक। जमींदार बढ़ती कीमतों के दौरान नुकसान में रहते हैं क्योंकि उन्हें निश्चित किराए मिलते हैं। किसान मालिक, हालांकि, जो अपने खेतों को अपनाते हैं और खेती करते हैं, लाभ में रहते है। उच्च मुद्रास्फीति की अवधि के दौरान, कृषि उत्पादों की कीमतें उत्पादन की कीमत की तुलना में तेजी से बढ़ती हैं – मजदूरी की दर और भूमि राजस्व उसी तरह नहीं बढ़ते हैं जैसे कि कृषि उपज की कीमतों में वृद्धि होती है। भूमिहीन कृषि श्रमिकों, पर बढ़ती कीमतों से कड़ी चोट पड़ती हैं। उनका वेतन खेत मालिकों द्वारा बढ़ाया नहीं; सरकार अक्सर न्यूनतम मजदूरी को संशोधित नहीं करती है और व्यापार संघवाद उनके बीच अनुपस्थित है।

8.3.5 सरकार

सरकार कर्जदार के रूप में उन परिवारों की लागत पर लाभ उठाती है जो इसके प्रमुख लेनदार हैं। ऐसा इसलिए है क्योंकि सरकारी बॉन्ड पर ब्याज दरें तय रहती हैं और कीमतों में बढ़ोतरी की भरपाई के लिए उन्हें उठाया नहीं जाता है। हालांकि परिवार कर दाताओं के रूप में लाभ प्राप्त होता है। करों का भुगतान एक अंतराल के साथ किया जाता है, वर्ष के दौरान अर्जित आय पर, और मुद्रास्फीति के कारण करों का वास्तविक कीमत कम हो जाता है।

इस प्रकार, सरकार के साथ काम करते समय परिवारों पर शुद्ध प्रभाव का आंकलन जटिल रहता है। लेनदारों के रूप में, उनकी संपत्ति के वास्तविक कीमत और कर–दाताओं के रूप में, उनकी देनदारियों के वास्तविक मूल्य में मुद्रास्फीति के दौरान गिरावट आती है।

8.4 अवस्फीति (dis-inflation) की कीमत

पिछले अनुच्छेद में हमने देखा कि मुद्रास्फीति के परिणामस्वरूप से आय के पुनः वितरण निम्न आय वर्ग सबसे अधिक पीड़ित हैं। उच्च मुद्रास्फीति के कारण लोगों में असंतोष देखा गया है; यह कभी–कभी कई देशों में राजनीतिक अस्थिरता और सरकार गिरने का कारण भी बना है। इस प्रकार, मुद्रास्फीति के परिणाम न केवल आर्थिक हैं, बल्कि सामाजिक और राजनीतिक भी हैं। इसे देखते हुए, नीति निर्माता हमेशा मुद्रास्फीति को नियंत्रित करने की कोशिश करते हैं। वास्तव में, भारत सहित कई देशों ने मौद्रिक नीति के एकमात्र उद्देश्य के रूप में मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण (inflation targeting) को आगे बढ़ाया है। जब उच्च मुद्रास्फीति होती है, तो सरकार को एक कड़ी मौद्रिक नीति अपनानी होती है ताकि कुल मांग नियंत्रण में आ जाए। नीतियों को मुद्रास्फीति की दर में कमी, यानी अवस्फीति (dis-inflation), यानी महंगाई में कमी की ओर बढ़ाया जाता है।

उच्च मुद्रास्फीति की अवधि के दौरान, सरकारी राजस्व सरकारी खर्चों की तुलना में कम रह जाता है जिसके परिणामस्वरूप बड़ा राजकोषीय घाटा होता है। घाटा के लिए सरकार के पास तीन विकल्प होते हैंः जनता से उधार लेना, विदेशी मुद्रा आरक्षित भंडार घटाना, और मुद्रा के वित्त पोषण छापना। आमतौर पर भारी घाटे में चल रही सरकार पहले से ही भारी कर्ज में डूबी होती है और अधिक ब्याज दे रही होती है। इसलिए, आगे उधार लेना मुश्किल हो जाता है। इसके अलावा, ऐसी सरकारों के पास विदेशी मुद्रा भंडार भी कम होता है और इसलिए, मुद्रा मुद्रित करना एक आसान विकल्प बन जाता है जो मुद्रास्फीति की दर को बढ़ाता है। आप 1990–91 में भारतीय हालत को याद कर सकते हैं जब यह भारी कर्ज में डूबा हुआ था, विदेशी मुद्रा भंडार अचानक कम हो गया था, और दोहरे अंकों में मुद्रास्फीति थी। सामान्य तौर पर, उच्च मुद्रास्फीति अर्थव्यवस्था को विकास क्रम से बाहर कर देती है और आर्थिक स्थिरता को बनाए रखना मुश्किल हो जाता है।

मुद्रास्फीति की दर को कम करने के लिए, एक अर्थव्यवस्था में नीति निर्माताओं को उपभोग और निवेश पर प्रतिबंध लगाने और सरकारी व्यय में कटौती के माध्यम से कुल मांग को कम करना है। जब निवेश (निजी और सार्वजनिक दोनों) कम हो जाता है, तो आर्थिक संवृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है (याद रखें कि निवेश में कमी के लिए गुणक प्रभाव भी काम करता है)। इसके अलावा, निवेश में गिरावट के साथ, देश में बेरोजगारी बढ़ेगी। वास्तव में, फिलिप्स वक्र' (किसी अन्य इकाई में चर्चा की जाने वाली) मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच संबंध का वर्णन करती है। व्यावहारिक रूप से यह देखा गया है कि मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच विलोम संबंध कम से कम अल्पावधि में तो अवश्य होता है। फिलिप्स वक्र का एक निहितार्थ यह है कि मुद्रास्फीति की कम दर तभी संभव है जब सरकार बेरोजगारी की उच्च दर को स्वीकार करने के लिए तैयार हो।

इस प्रकार, अल्पावधि में मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच एक सम प्रत्ययन हो सकता है। उच्च बेरोजगारी समस्याओं का एक और समूह भी अपने साथ लाती है – निम्न आर्थिक संवृद्धि, बढ़ती गरीबी, सामाजिक असंतोष और राजनीतिक अस्थिरता की संभावना।

त्याग–अनुपात (sacrifice-ratio): धीमी आर्थिक वृद्धि राजकोषीय लक्ष्यों पर दबाव डालती है – राजस्व उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है क्योंकि संवृद्धि दर धीमी हो जाती है जबकि कीमत बढ़ने के कारण सरकारी व्यय बढ़ जाता है।

उच्च राजकोषीय घाटा न केवल मुद्रास्फीति, बल्कि सरकारी ऋण का भी स्रोत है। बहुत बार हम मुद्रास्फीति की कीमत को 'त्याग अनुपात' के संदर्भ में मापते हैं, जिसे निम्नानुसार परिभाषित किया गया है:

त्याग-अनुपात = (उत्पादन का प्रतिशत नुकसान)/(मुद्रास्फीति की दर में गिरावट)

उदाहरण के लिए, एक देश के लिए, मुद्रास्फीति में 2 प्रतिशत की गिरावट आई, जबकि उत्पादन में 5 प्रतिशत की गिरावट आई। इस प्रकार, त्याग का अनुपात 5/2 है, अर्थात 2. 5 है। त्याग अनुपात संभावित उत्पादन को इंगित करता है जिसको मुद्रास्फीति को एक प्रतिशत तक कम करने के लिए त्याग करना पड़ता है।

शीत टर्की (Cold Turkey) या क्रमवाद (Gradualism)

अवस्फीति (dis-inflation) की प्रक्रिया में, एक सवाल उठता है: क्या नीति निर्माताओं को मुद्रास्फीति की दर में तेजी से गिरावट का पक्ष लेना चाहिए या उन्हें ऐसी नीति का पालन करना चाहिए कि मुद्रास्फीति में कमी क्रमिक (gradual) रहे। पारम्परिक अर्थशास्त्रियों का सुझाव है कि अवस्फीति की प्रक्रिया तेज होनी चाहिए – इस रणनीति को कभी–कभी कोल्ड टर्की या शीत टर्की कहा जाता है। इस दृष्टिकोण के अनुसार, कीमतें घटाने की सरकारी नीति दिखाई देनी चाहिए, और लोगों में यह विश्वास आना चाहिए कि सरकार ईमानदारी से मुद्रास्फीति को कम करने की कोशिश कर रही है। इस प्रक्रिया यह अपेक्षित मुद्रास्फीति कम होगी। हालांकि केनेसियन अर्थशास्त्री एक 'क्रमिक दृष्टिकोण' का सुझाव देते हैं, क्योंकि अर्थव्यवस्था में कई टकराव होते हैं। अर्थव्यवस्था में कई मजदूरी अनुबंध होते हैं जिन्हें समाप्त होने के लिए समय की आवश्यकता होती है और इस प्रकार अर्थव्यवस्था को सरकार द्वारा निर्धारित नए मुद्रास्फीति लक्ष्य को समायोजित करने के लिए कुछ समय की आवश्यकता होती है। समायोजन की अवधि के दौरान बेरोजगारी दर बहुत अधिक हो सकती है। कीनेसियन दृष्टिकोण के अनुसार, शीत टर्की दृष्टिकोण मुद्रास्फीति की उम्मीदों को कम नहीं कर सकती, क्योंकि लोगों को संदेह हो सकता है कि क्या मुद्रास्फीति को इतनी तेज़ी से नीचे लाना संभव है। इसके अलावा, उनके अनुसार, मुद्रास्फीति में तेजी से गिरावट की कीमत उच्च बेरोजगारी और राजनीतिक रूप से अस्थिर होने के संदर्भ में बहुत अधिक होगी।

बोध प्रश्न – 2

1) अप्रत्याशित मुद्रास्फीति से होगी (सही उत्तर पर टिक करें)

   क) कर्जदारों पर चोट।

   ख) लेनदारों पर चोट।

   ग) उधारकर्ताओं और उधारदाताओं को समान रूप से चोट।

   घ) उधारकर्ताओं या उधारदाताओं पर कोई प्रभाव नहीं।

2) एक अर्थव्यवस्था के लिए अवस्फीति की कीमत का एक संक्षिप्त विवरण दें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

8.5 सार–संक्षेप

मुद्रास्फीति के मुख्य रूप से दो प्रकार हैंः मांग–मुद्रा मुद्रास्फीति और कीमत–जनित मुद्रास्फीति। दोनों प्रकार की मुद्रास्फीति एक अर्थव्यवस्था के भीतर समग्र कीमत स्तर में वृद्धि का कारण बनती है। मांग–जनित मुद्रास्फीति तब होती है जब अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं की कुल मांग अर्थव्यवस्था की उत्पादक क्षमता की तुलना में अधिक तेजी से बढ़ती है।

दूसरी ओर, कीमत–जनित मुद्रास्फीति, तब होती है जब उत्पादन प्रक्रिया/कारक आदानों की कीमतें बढ़ जाती हैं। तेजी से मजदूरी बढ़ जाती है या कच्चे माल की बढ़ती कीमतें इस प्रकार की मुद्रास्फीति का सामान्य कारण हैं। लंबे समय में मुद्रा आपूर्ति के विस्तार के कारण भी मुद्रास्फीति होती है। हालांकि, व्यापार चक्र, अंतरराष्ट्रीय तेल की कीमतें, विनिमय दरों में परिवर्तन आदि जैसे कई कारक हैं; जो अल्पावधि में मुद्रास्फीति के कारण बन सकते हैं।

इसके अलावा, हमने मुद्रास्फीति के संरचनात्मक सिद्धांत से सीखा है कि संरचनात्मक कारक, जैसे बचत–निवेश की खाई, भोजन की कमी, विदेशी मुद्रा की कमी, ढांचागत अड़चनें आदि, कम विकसित देशों में मुद्रास्फीति के वास्तविक कारण हैं।

मुद्रास्फीति के आर्थिक, सामाजिक और राजनीतिक निहितार्थ हैं। मुद्रास्फीति से धन का पुनः वितरण होता है, आमतौर पर अमीरों के पक्ष में। इसके अलावा, हमने समाज के विभिन्न वर्गों पर मुद्रास्फीति के प्रभाव पर चर्चा की। समाज के कुछ समूह दूसरों की तुलना में महंगाई से अधिक प्रभावित होते हैं। आमतौर पर, निश्चित आय वाले लोगों, जैसे, श्रमिक, वेतनभोगी व्यक्ति, शिक्षक, पेंशनभोगी, ब्याज और किराए से निर्वाह करने वाले को मुद्रास्फीति के दौरान बदतर बना दिया जाता है क्योंकि उनकी आय कीमतों जितनी तेजी से नहीं बढ़ती है।

8.6 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न – 1

1) 1–ख 2–घ 3–क 4–ग

2) घ

3) केन्जिय दृष्टिकोण के अनुसार, मांग–जनित मुद्रास्फीति तब होती है जब कुल मांग उत्पादन के पूर्ण रोजगार स्तर पर कुल आपूर्ति से अधिक हो जाती है, जिससे कुल व्यय (C + I + G) और उत्पादन के पूर्ण रोजगार स्तर के बीच संबंध के लिए मुद्रास्फीति होती है। उप–भाग 8.2.1 देखें। कीमत–जनित मुद्रास्फीति का केंजीय सिद्धांत, मुद्रास्फीति के मूल कारण को कारकों की आपूर्ति करने के लिए प्रेरित करता है, विशेष रूप से इस संभावना से कि उत्पादन कीमत बढ़ने से मुद्रास्फीति को बढ़ावा मिलेगा। उप–भाग 8.2.2 देखें।

बोध प्रश्न – 2

1) ख

2) भाग 8.3 का संदर्भ लें और उत्तर दें।

इकाई 9 फिलिप्स वक्र*

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 विषय–प्रवेश

9.2 बेरोजगारी के प्रकार

9.3 फिलिप्स वक्र

9.4 बेरोजगारी की स्वाभाविक दर

9.5 अर्थशास्त्र में प्रत्याशाएँ

9.5.1 अनुकूली प्रत्याशाएँ

9.5.2 युक्तियुक्त प्रत्याशाएँ

9.6 प्रत्याशा–वर्धित फिलिप्स वक्र

9.6.1 अनुकूली प्रत्याशाओं के तहत फिलिप्स वक्र

9.6.2 युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के तहत फिलिप्स वक्र

9.7 सार–संक्षेप

9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर

9.0 उद्देश्य

प्रस्तुत इकाई को पढ़ने के बाद आप इस योग्य होंगे कि ––

- विभिन्न प्रकार की बेरोजगारी पहचान सकें;
- बेरोजगारी की स्वाभाविक दर संबंधी संकल्पना स्पष्ट कर सकें;
- बेरोजगारी और मुद्रास्फीति के बीच संबंध स्थापित कर सकें;
- अनुकूली और युक्तियुक्त प्रत्याशाओं संबंधी संकल्पनाओं का वर्णन कर सकें;
- स्पष्ट कर सकें कि अल्पावधि फिलिप्स वक्र कैसे खिसकता है; तथा
- अल्पावधि और दीर्घावधि में फिलिप्स वक्र की आकृति में अंतर समझ सकें।

9.1 विषय–प्रवेश

जैसा कि आपको पिछली दो इकाइयों से ज्ञात ही है, मुद्रास्फीति एक ऐसी स्थिति है जिसमें वस्तु व सेवाओं की कीमतों में सामान्य और सतत वृद्धि देखी जाती है। जब–जब सामान्य कीमत स्तर में वृद्धि होती है, मुद्रा के मान में ह्रास होता है और परिवारों की क्रय शक्ति में परिणामी गिरावट देखी जाती है। मुद्रास्फीति की दर में वृद्धि विनिमय दर को भी प्रतिकूलतः प्रभावित करती है। इसके मूल में माँग व आपूर्ति से जुड़े अनेक कारण होते हैं।

* प्रो० कौस्तुभ बारिक, इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय।

तदनुसार, मुद्रास्फीति को दो वर्गों में रखकर देखा जा सकता है – माँग जन्य (माँग में वृद्धि के कारण जन्मी) और लागत जन्य (उत्पादन लागत में वृद्धि से जन्मी)।

मुद्रास्फीति से अलग/भिन्न, एक महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दा है बेरोजगारी या बेकारी। यह लोगों के लिए आर्थिक निहितार्थ दर्शाती है – बेरोजगारी एक ऐसी स्थिति है जिसमें कोई स्वस्थ व्यक्ति, जो काम करने का इच्छुक है, प्रचलित वेतन पर रोजगार पाने में विफल रहता है। इसके परिणामस्वरूप न सिर्फ परिवार की आय शून्य हो जाती है, बल्कि व्यक्ति की मनोदशा भी गिर जाती है। सामूहिक स्तर पर, इसके परिणामस्वरूप बहुमूल्य मानव संसाधन की हानि होती है – बेरोजगार लोगों की सेवाएँ वस्तु व सेवाओं के उत्पादन में लाभकारिता के साथ उपयोग की जा सकती थीं। वस्तुतः मुद्रास्फीति और बेरोजगारी को समाज की दो आवश्यक बुराइयाँ माना जाता है। मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के सामाजिक निहितार्थ, बहरहाल, कहीं अधिक गंभीर हैं। ये समस्याएँ किसी भी देश में सामाजिक तनाव और राजनीतिक अस्थिरता की ओर ले जा सकती हैं।

अर्थशास्त्रियों के लिए मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच संबंध एक लम्बे समय से कुतूहल का विषय रहा है। आपको याद ही होगा कि परंपरागत अर्थशास्त्री वास्तविक क्षेत्र को मौद्रिक क्षेत्र से स्वतंत्र रखे जाने के पक्षधर थे। जबकि बेरोजगारी एक वास्तविक चर है, मुद्रास्फीति मौद्रिक क्षेत्र से ताल्लुक रखती है। तदनुसार, परंपरागत अर्थशास्त्री मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच किसी संबंध की कल्पना नहीं कर सकते थे। परंपरागत अर्थशास्त्रियों के अनुसार, मुद्रा आपूर्ति में कोई भी वृद्धि, उत्पादन स्तर को अपरिवर्तित रहने देकर, कीमत स्तर में वृद्धि की ओर अग्रसर करती है (देखें मुद्रा का परिमाण सिद्धांत)। वेतन दर में लोच की अवधारणा ने किसी व्यक्ति के बेरोजगार रहने की संभावना को नियम–विरुद्ध घोषित किया।इस प्रकार, परंपरागत अर्थशास्त्रियों ने बेरोजगारी को समस्या के रूप में कभी नहीं लियाय उन्होंने इसे एक अस्थायी विषय ही माना। कीन्स ने, दूसरी ओर, कहा कि मौद्रिक चरों के वास्तविक निहितार्थ होते हैं। उनके द्वारा सुझाई गई संप्रेषण क्रियाविधि निम्नवत् है – जब मुद्रा आपूर्ति बढ़ती है तो ब्याज दर में गिरावट देखी जाती है। निम्न ब्याज दर निवेश में वृद्धि की ओर अग्रसर करती है। निवेश में वृद्धि रोजगार और उत्पादन में वृद्धि की ओर ले जाती है।

जैसा कि हमने व्यष्टि अर्थशास्त्र में पढ़ा है, व्यापार प्रतिष्ठानों में श्रमिक की माँग रहती है क्योंकि वह वस्तु व सेवाओं के उत्पादन में योगदान देता है। अपने इस योगदान के बदले उसे वेतन दिया जाता है। श्रम बाजार में, साम्य वेतन दर एक ऐसे स्तर पर तय की जाती है जहाँ श्रम आपूर्ति श्रम की माँग के बराबर होती है। जबकि उच्च वेतन दर पर व्यक्ति कहीं अधिक श्रमापूर्ति करता है, फर्में वेतन दर ऊँची होने पर श्रमिक संख्या कम ही चाहती हैं। तदनुसार, श्रमापूर्ति का वेतन दर से एक सकारात्मक संबंध (अर्थात् धनात्मक ढलान आपूर्ति वक्र) देखा जाता है जबकि श्रमबल की माँग वेतन दर से एक नकारात्मक संबंध (अर्थात् ऋणात्मक ढलान माँग वक्र) दर्शाती है।

इस इकाई में हम फिलिप्स वक्र से दर्शाए जाने वाले मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच संबंध पर विचार करेंगे। साथ ही, हम अल्पावधि और दीर्घावधि के बीच फिलिप्स वक्र की आकृति में अंतर का विश्लेषण करेंगे।

9.2 बेरोजगारी के प्रकार

एक संकल्पना के रूप में श्रमबल 16 वर्ष से लेकर 64 वर्ष तक आयु वर्ग में ऐसे सभी लोगों को समाहित करता है जो काम करने के इच्छुक हों। तदनुसार, इसमें रोजगारप्राप्त और बेरोजगार दोनों ही लोग शामिल होते हैं। श्रमबल में उन लोगों को शामिल नहीं करते

हैं जो सेवानिवृत्त हैं, जो रुग्णता की वजह से काम नहीं कर सकते, जो घरबार देखते हैं, या फिर वे जो काम करना ही नहीं चाहते।

दूसरी ओर, कार्यबल की संकल्पना संकीर्णता दर्शाता है– इसमें सिर्फ रोजगारप्राप्त व्यक्ति ही शामिल माने जाते हैं। इस प्रकार, श्रमबल और कार्यबल के बीच का अंतर बेरोजगारों की संख्या दर्शाता है।

रोजगारप्राप्त व्यक्ति से हमारा अभिप्राय होता है – वे लोग जो कोई सवेतन कार्य करते हैं (तदनुसार, इनमें गृहणियाँ शामिल नहीं) और वे जो नौकरी करते हैं। दूसरी ओर, बेरोजगार या बेकार एक ऐसे लोगों की श्रेणी है जिन्हें रोजगार प्राप्त नहीं है बल्कि वे सक्रिय रूप से काम तलाश कर रहे हैं। तदनुसार, बेरोजगारी पर विचार करते समय हम उन लोगों को नहीं लेते जो श्रमबल में नहीं गिने जाते। बेरोजगारी दर को हम बेरोजगार संख्या भाग कुल श्रमबल के रूप में परिभाषित करते हैं। हमें यह याद रखना होगा कि बेरोजगारी की संकल्पना कानिहितार्थ है – अनैच्छिक बेरोजगारी। दूसरे शब्दों में, व्यक्ति प्रचलित वेतन दर पर काम करने को इच्छुक है मगर उसे काम ही नहीं मिल रहा।

यहाँ हम बेरोजगारी के तीन प्रकार देखते हैं, यथा – प्रतिरोधात्मक, संरचनात्मक और चक्रीय। चलिए, अब इनके बीच अंतर समझते हैं।

(i) **प्रतिरोधात्मक बेरोजगारीः** यह इसलिए दृष्टिगत होती है कि लोग एक नौकरी छोड़कर दूसरी पकड़ा करते हैं। कई बार नौकरी का कार्यकाल समाप्त हो जाता है और कोई और नौकरी मिलने तक कर्मी बेकार ही रहता है। अन्य उदाहरणों में, कर्मी जन बेहतर नौकरी की तलाश में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में प्रवास करते हैं अथवा अल्प समयावधियों में बिना काम के ही रहना पसंद करते हैं। प्रतिरोधात्मक बेरोजगारी इसलिए फैलती है कि अपूर्ण–सूचना सम्पन्न किसी भी अर्थव्यवस्था में नौकरी की तलाश और उपयुक्तता सहज नहीं हुआ करते फलतः उस अर्थव्यवस्था में प्रतिरोध अर्थात् टकराव नजर आने लगते हैं।

(ii) **संरचनात्मक बेरोजगारीः** इस प्रकार की बेरोजगारी विभिन्न प्रकार की नौकरियों हेतु आपूर्ति और माँग के बीच उचित मेल न होने के कारण उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, हाल के वर्षों में, भारत में नौकरियों की तलाश कर रहे इन्जीनियरों और प्रबंधन पेशेवरों की संख्या उपलब्ध नौकरियों से कहीं अधिक रही है। इसके परिणामस्वरूप, तकनीकी योग्यता सम्पन्न अनेक लोग निम्न योग्यता चाहने वाली नौकरियों का विकल्प चुन रहे हैं। किसी भी अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक बेरोजगारी मुख्यतः उसमें होने वाले संरचनात्मक बदलावों के कारण आती है और ऐसे परिवर्तनों केप्रति समंजित होने में समय लगता है। भारत में अब बड़ी संख्या में शिक्षा संस्थान अपने इंजीनियरिंग कार्यक्रम बंद कर चुके हैं।

(iii) **चक्रीय बेरोजगारीः** बेरोजगारी का यह प्रकार कुल माँग में उतार–चढ़ाव के कारण जन्म लेता है। जब कुल माँग घटती है तो श्रमिकों की माँग में सहकालिक गिरावट और बेरोजगारी में परिणामी वृद्धि देखी जाती है। दूसरी ओर, अर्थव्यवस्था में कोई भी सामान्य उछाल श्रमिकों की माँग बढ़ा देता है और बेरोजगारी में कमी ले आता है। इस प्रकार, चक्रीय बेरोजगारी स्वभावतः चक्र–समर्थक होती है।

आनुभविक आँकड़े दर्शाते हैं कि किसी भी अर्थव्यवस्था में श्रमबल उसकी कुल जनसंख्या के मुकाबले काफी कम ही होता है। भारत में कुल श्रमबल, कुछ स्रोतों के अनुसार, वर्ष 2020 में अनुमानित जनसंख्या 138 करोड़ की तुलना में लगभग 50 करोड़ ही रहा। कुल

जनसंख्या की श्रमबल के आकार से तुलना करते समय 65 वर्ष से ऊपर के व्यक्तियों और 15 वर्ष से कम उम्र के बच्चों पर, बहरहाल, विचार नहीं किया जाना चाहिए। इस संदर्भ में एक उचित अनुपात है – श्रमबल भागीदारी दर (Labour Force Participation Rate - LFPR)। इसे निम्नवत् परिभाषित किया जा सकता है –

$$\text{LFPR} = \frac{\text{श्रमबल का आकार}}{16 - 64 \text{ आयुवर्ग में जनसंख्या का आकार}}$$

श्रमबल भागीदारी दर (LFPR) भिन्न–भिन्न देशों में, और एक ही देश में कालान्तर में भिन्न–भिन्न देखी जाती है। यदि हम लिंगभेद को ध्यान में रखें तो पाएँगे– पुरुष श्रमबल भागीदारी दर (Male LFPR) और स्त्री श्रमबल भागीदारी दर (Female LFPR) । प्रायः पुरुष श्रमबल भागीदारी दर और स्त्री श्रमबल भागीदारी दर के बीच अंतर देखा जाता है। भारत में, उदाहरण के लिए, स्त्री श्रमबल भागीदारी दर (Female LFPR) पुरुष श्रमबल भागीदारी दर (Male LFPR) की तुलना में काफी नीची है। इसके अलावा, हाल के वर्षों में स्त्री श्रमबल भागीदारी दर में तेज गिरावट देखी गई है। इस प्रकार की गिरावट सांस्कृतिक एवं संरचनात्मक मुद्दों की वजह से देखी जाती है।

बेरोजगारी की दर u को कुल श्रमबल के प्रति बेरोजगार व्यक्तियों के अनुपात के रूप में परिभाषित किया जाता है। बेरोजगारी की दर भिन्न–भिन्न देशों में, और एक ही देश में कालान्तर में भिन्न–भिन्न देखी जाती है।

9.3 फिलिप्स वक्र

ए. डब्ल्यू. फिलिप्स के नाम पर प्रचलित फिलिप्स वक्र बेरोजगारी और मुद्रास्फीति के बीच संबंध की व्याख्या करता है। वर्ष 1958 में लंदन स्कूल ऑफ इकनॉमिक्स के तत्कालीन प्रोफेसर फिलिप्स ने वर्ष 1861–1957 की अवधि में यूनाइटिड किंग्डम में बेरोजगारी की दर और मौद्रिक वेतन दर में वृद्धि की दर संबंधी समय–शृंखला आँकड़े एकत्र किए और उनके बीच संबंध स्थापित करने का प्रयास किया। उन्होंने नीचे लिखे रूप में एक सरल रैखिक समीकरण लिखा –

$$\dot{w} = a - bu$$

जहाँ $\dot{w}$ वेतन वृद्धि दर है। a और b अचर हैं और u बेरोजगारी की दर है। फिलिप्स ने पाया कि इस निहितार्थ के साथ कि बेरोजगारी की निम्न दर वेतन वृद्धि की उच्च दर से सहबद्ध होती है, $\dot{w}$ और u के बीच एक स्थिर और ऋणात्मक संबंध होता है। फिलिप्स द्वारा इन परिणामों के प्रकाशन के पश्चात अनेक अर्थशास्त्रियों ने उनका अनुसरण कर अन्य देशों के लिए भी इसी प्रकार के अनुप्रयोगों का प्रयास किया।तदन्तर, यह सिद्ध हुआ कि बढ़ता वेतन दर और बढ़ती कीमत स्तर के बीच एक स्थाई संबंध होता है। इससे कुछ अर्थशास्त्री फिलिप्स द्वारा आकलित सरल समीकरण को परिष्कृत करने और वेतन दर वृद्धि के स्थान पर मुद्रास्फीति (कीमतों में वृद्धि दर) का प्रयोग करने को प्रेरित हुए। अनेक उदाहरणों में चरों के प्रकीर्ण आरेख का बिखराव एक वक्र के रूप में दृष्टिगत हुआ, जो कि मूल बिंदु की ओर था। चूँकि आनुभविक अध्ययन मुद्रास्फीति की दर और बेरोजगारी की दर के बीच संबंध को प्रबलित करते थे, फिलिप्स वक्र शीघ्र ही नीति विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण साधन बन गया।

इस प्रकार के परिणाम का नीति निहितार्थ (policy implication) अद्भुत था – कोई भी अर्थव्यवस्था निम्न मुद्रास्फीति और निम्न बेरोजगारी दोनों एक साथ नहीं दर्शा सकती।

किसी भी अर्थव्यवस्था को बेरोजगारी काबू में करने के लिए वेतन वृद्धि की उच्चतर दर अथवा उसका विलोम सहनकरना ही पड़ता है। तदनुसार, फिलिप्स वक्र किसी भी सरकार की विवेकाधीन स्थिरीकरण नीति को उचित ठहराता है।

चित्र 9.1 में हमने एक विशिष्ट फिलिप्स वक्र दर्शाया है। मान लीजिए कि अर्थव्यवस्था मुद्रास्फीति दर I_1 और बेरोजगारी दर u_1 के साथ बिंदु A पर सक्रिय है। यदि सरकार बरोजगारी दर घटाकर u_2 पर लाना चाहे तो अर्थव्यवस्था को मुद्रास्फीति की कोई उच्चतर दर सहन करनी पड़ती है।

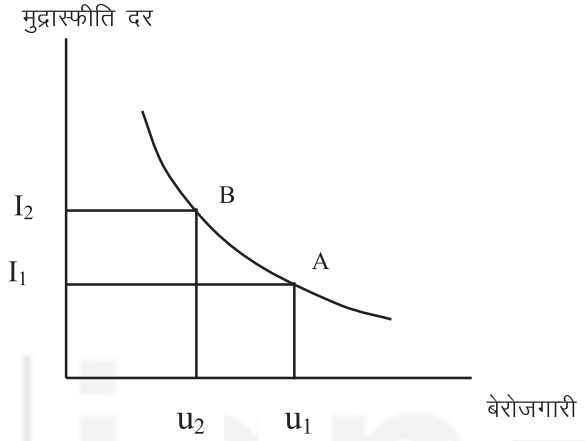

चित्र 9.1: फिलिप्स वक्र

सन 1960 के दशक और 1970 के पूर्वार्ध में फिलिप्स वक्र को नीति विश्लेषकों का एक महत्वपूर्ण साधन माना जाता था। इसकी विधि सरल और स्पष्ट थी – अधिक बेरोजगारी के दौरान सरकार कोई विस्तारकारी मौद्रिक नीति अपना सकती थी ताकि लोगों के पास अधिक धन रहे। इससे मुद्रास्फीति की दर बढ़ने और बेरोजगारी घटने की संभावना रहती थी। इसके विपरीत, अधिक महँगाई होने के दौरान सरकार कोई संकुचनकारी आर्थिक नीति अपना सकती थी ताकि मुद्रास्फीति दर घट सके; इस प्रकार की किसी नीति की लागत, बहरहाल, बेरोजगारी की पहले से कहीं ऊँची दर मानी जाती थी। इस प्रकार, अर्थशास्त्रियों का मानना था कि मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच एक समझौताकारी समन्वय होता है। सरकार फिलिप्स वक्र का ढलान और स्थिति के अनुसार मुद्रास्फीति दर और बेरोजगारी दर का कोई संयोजन चुन सकती है।

दशक 1970 के उत्तरार्ध और 1980 के पूर्वार्ध में, बहरहाल, इस प्रकार की मान्यता धूमिल पड़ गई। फिलिप्स वक्र के नुस्खे अब कतई कारगर नहीं रहे। अर्थव्यवस्थाएँ अब बढ़ी महँगाई के साथ–साथ बढ़ी बेरोजगारी से भी ग्रस्त रहने लगीं। जब बेरोजगारी बढ़ी तो आर्थिक संवृद्धि में गतिहीनता का आशय लिए उत्पादन का निम्न स्तर नजर आया। जब सरकारों ने कुल माँग बढ़ाने के लिए उच्चतर राजकीय व्यय वाली केन्जियन नीति का नुस्खा अपनाना चाहा तो मुद्रास्फीति की दर बढ़ गई। तदनुसार, अधिकांश देशों में 'अवरुद्ध स्फीति'–गतिहीनता और मुद्रास्फीति का संयोजन – की स्थिति नजर आयी। अवरुद्ध स्फीति का कारण वर्ष 1973 और 1979 के दौरान छाए 'तेल संकट' की वजह से आपूर्ति आघातों को माना गया (देखें इकाई 6)। इस स्थिति ने अर्थशास्त्रियों को अवरुद्ध स्फीति के कारण और गहराई से ढूँढ़ लाने के लिए प्रेरित किया।

9.4 बेरोजगारी की स्वाभाविक दर

आपका सरोकार 'पूर्ण रोजगार' पदबंध से अवश्य ही रहा होगा, जिसका निहितार्थ होता है कि किसी अर्थव्यवस्था विशेष में सभी कर्मी रोजगारप्राप्त हैं। आपने कभी इस प्रकार की स्थिति पर विचार किया है? क्या ऐसी स्थिति लाई जा सकती है? जब हम कहते हैं कि कोई अर्थव्यवस्था 'पूर्ण रोजगार' स्तर पर काम कर रही है तो हमारा अभिप्राय यह नहीं होता कि वहाँ शून्य बेरोजगारी है। बाजारों में खामियों, वेतनों एवं कीमतों में कठोरताओं, और अर्थव्यवस्था में विभिन्न टकरावों के चलते शून्य बेरोजगारी कायम करना संभव नहीं होता। उदाहरण के लिए, किसी भी समय–बिंदु पर कुछ कर्मी एक नौकरी से दूसरी नौकरी में स्थानांरण प्रक्रिया में होते हैं (प्रतिरोधात्मक बेरोजगारी)। इसी प्रकार, कुछ कर्मी उन्हें प्राप्त योग्यता और वांछित योग्यता के बीच मेल न होने की वजह से काम पर नहीं रखे जा सकते (संरचनात्मक बेरोजगारी)।

उपर्युक्त के संदर्भ में, सन 1960 के दशक में मिल्टन फ्रीडमैन और एडमंड फेल्प्स द्वारा स्वतंत्र रूप से 'बेरोजगारी की स्वाभाविक दर' नामक एक नयी संकल्पना प्रस्तुत की गई। बेरोजगारी की स्वाभाविक दर अर्थव्यवस्था में टकरावों और खामियों को ध्यान में रखती है और यह मानकर चलती है कि किसी भी अर्थव्यवस्था में, किसी भी समय–बिंदु पर, उसके श्रमबल का बेरोजगार रहना स्वाभाविक ही है। आप देखेंगे कि ऐसी कोई भी बेरोजगारी जो स्वाभाविक नहीं है, व्यापार चक्र के कारण अथवा नीति संबंधी हो सकती है। आनुभविक उद्देश्यों से, यह प्रतिरोधात्मक बेरोजगारी और संरचनात्मक बेरोजगारी का संयोजन होता है। यह देश–देश में और एक ही देश में कालांतर में भिन्न–भिन्न होता है। अमेरिकी अर्थव्यवस्था के लिए, उदाहारण के लिए, बेरोजगारी की स्वाभाविक दर 3.5 प्रतिशत और 4. 5 प्रतिशत के बीच आकलित की गई है। अनेक देश बेरोजगारी की स्वाभाविक दर के आकलन सम्बन्धी अपनी रिपोर्ट ही प्रस्तुत नहीं करते। बेरोजगारी की स्वाभाविक दर सम्बन्धी संकल्पना ने हाल के वर्षों में समष्टि–अर्थशास्त्रीय विश्लेषण को पुनरू रूपायित किया। जैसा कि हम इस इकाई में आगे पढ़ेंगे, भावी आर्थिक परिवेश विषयक आर्थिक अभिकरणों (यथा, परिवार, फर्में व सरकार) की अपेक्षाएँ फिलिप्स वक्र की आकृति एवं स्थिति में एक प्रमुख भूमिका निभाती हैं।

बोध प्रश्न 1

1. बेरोजगारी के विभिन्न प्रकारों पर एक संक्षिप्त टिप्पणी लिखें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. स्पष्ट करें कि किस प्रकार फिलिप्स वक्र सरकार के समक्ष नीति विकल्प प्रस्तुत कर सकता है।

   .....

   .....

   .....

   .....

3. निम्नलिखित संकल्पनाओं को परिभाषित करें–

(i) अनैच्छिक बेरोजगारी
(ii) बेरोजगारी की स्वाभाविक दर
(iii) श्रमबल भागीदारी दर
(iv) मुद्रास्फीति–बेरोजगारी समझौताकारी समन्वय

.....

.....

.....

.....

.....

9.5 अर्थशास्त्र में प्रत्याशाएँ

प्रत्याशाएँ अर्थात अपेक्षाएँ (expectations) निर्णयन प्रक्रिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। वर्षा ऋतु में जब हमें बाहर जाना होता है तो हम आसमान की ओर देखते हैं अथवा मौसम का पूर्वानुमान सुनते हैं। यदि आपको लगता हो कि दोपहर बाद वर्षा हो सकती है तो आप छाता साथ रख लेते हैं। इसके अलावा, यदि आपको लगता हो कि वहीं रुकना पड़ सकता है तो आप आवश्यक प्रबंध करके चलते हैं। इसी प्रकार, आर्थिक अभिकर्ता आर्थिक चरों (जैसे कीमतें, माँग, राजकीय नीति, आदि) के विषय में प्रत्याशाओं को जन्म देते हैं और निर्णय लेते हैं। यदि कोई उत्पादनकर्ता यह अपेक्षा करता है कि आने वाले वर्षों में उसके उत्पादों की माँग बढ़ेगी तो अपनी उत्पादन क्षमता बढ़ाने का प्रयास करेगा। इसके लिए वह अनेक कारकों पर विचार कर सकता है, जैसेः

i) उत्पादन प्रौद्योगिकी में संभावित उन्नति जो वर्तमान में स्थापित मशीनों को अप्रचलित अर्थात प्रयोग की दृष्टि से पुराना पड़ चुका सिद्ध कर सकती है;

ii) नये प्रतिस्थापन के आ जाने से उत्पादन की माँग प्रभावित हो सकती है;

iii) सरकार की औद्योगिक, श्रम, व्यापार एवं कर नीतियों में परिवर्तन राजस्व एवं लागतों को प्रभावित कर सकता है; तथा

iv) युद्ध, व्यापार प्रतिरोध एवं परिवर्तनशील अंतर्राष्ट्रीय संबंध उत्पादन और विक्रय को प्रभावित कर सकते हैं। यदि कोई श्रमिक अपेक्षा करता है कि आगामी महीनों में श्रम की माँग कुछ बढ़ जाएगी तो वह अपने वेतन में वृद्धि की माँग कर सकता है।

दूसरी ओर, यदि श्रम की माँग कम हो रही हो तो वह नौकरी में बना रहना चाहेगा और कोई तरक्की नहीं माँगेगा। इसके अलावा, यदि कोई श्रमिक यह देखता है कि वस्तु व सेवाओं की कीमतें तेजी से बढ़ रही हैं (यानी महँगाई बढ़ रही है)तो वह पहले से अधिक वेतन की माँग करेगा ताकि उसकी वास्तविक वेतन दर कायम रहे।

जब महँगाई सही मानों में प्रत्याशित हो तो लोग सावधानी बरतते हैं और अपने भावी भुगतान/प्राप्तियाँ महँगाई की दर को ध्यान में रखकर करते हैं। बहरहाल, अप्रत्याशित मुद्रास्फीति आय समूहों के बीच आय पुनर्वितरण को प्रबलित करती है। प्रायः ऐसे वेतन–अर्जक वर्ग जो कोई स्थिर मौद्रिक वेतन पाते हों, घाटे में ही रहते हैं क्योंकि कीमत वृद्धि के कारण उनकी वास्तविक आय कम होने लगती है। अनेक अर्थशास्त्री एक लंबे समय से आर्थिक व्यवहार में प्रत्याशाओं की भूमिका सकारते रहे हैं।

केन्स (Keynes) लोगों की अपेक्षाओं की बात तो करते हैं मगर वह उसे अपने विश्लेषण में शामिल नहीं करते। आर्थिक सिद्धांत में प्रत्याशाओं का औपचारिक व्यवहार, बहरहाल, 1950 के दशक में प्रारंभ हुआ। प्रत्याशाओं से जुड़ी दो महत्वपूर्ण प्राक्कल्पनाएँ प्रचलित हैं, यथा, (i) अनुकूली प्रत्याशाएँ, और (ii) युक्तियुक्त प्रत्याशाएँ। इन दो प्राक्कल्पनाओं का संक्षिप्त विवरण नीचे प्रस्तुत है।

9.5.1 अनुकूली प्रत्याशाएँ

अनुकूली प्रत्याशाएँ (adaptive expectations) किसी भी चर के पिछले व्यवहार को ध्यान में रखती हैं। मान लीजिए कि समयावधि (t) के लिए कीमत स्तर P_t है और प्रत्याशित कीमत स्तर इंगित करने के लिए हमें उपरिलिखित 'e' दर्शाना पड़ता है। तदनुसार, अवधि (t) में प्रत्याशित कीमत स्तर P_t^e है। अनुकूली प्रत्याशाओं के अनुसार,

$$P_t^e = P_{t-1}^e + \lambda(P_{t-1} - P_{t-1}^e)$$

जहाँ P_{t-1} पूर्व समयावधि में कीमत स्तर है, और λ एक इस प्रकार का प्राचल है कि वह 0 से 1 तक के मान दर्शाता है।

उपर्युक्त समीकरण की व्याख्या हम निम्नवत् करते हैं –

पिछले वर्ष आर्थिक अभिकर्ताओं (माना, परिवार) ने कीमत स्तर P_{t-1}^e होने की अपेक्षा की। वास्तविक कीमत, बहरहाल, P_{t-1} ही रही। तदनुसार, $(P_{t-1} - P_{t-1}^e)$ के साथ एक पूर्वानुमान त्रुटि देखी गई। इस पूर्वानुमान त्रुटि के चलते, लोग अपनी प्रत्याशाएँ पिछले वर्ष की प्रत्याशित कीमत में $\lambda(P_{t-1} - P_{t-1}^e)$ जोड़कर अपनी प्रत्याशाएँ अद्यतन करेंगे। ध्यान दें कि लोग अपनी प्रत्याशाएँ अद्यतन करना चाहेंगे, और पिछले वर्ष के दौरान अपने द्वारा की गई भूल को सुधारना चाहेंगे।

आइए, एक उदाहरण लें। मान लीजिए कि वर्ष 2019 में फर्मों ने मुद्रास्फीति दर (π) 3 प्रतिशत (π_{t-1}^e) रहने की प्रत्याशा की थी। वास्तव में, मुद्रास्फीति दर 6 प्रतिशत (π_{t-1}), रही, जिससे 3 प्रतिशत की त्रुटि सामने आई। अब वर्ष 2020 में प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर (π_t^e का मान) क्या हो? स्पष्टतः, फर्मों को चालू वर्ष के लिए अपनी प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर अद्यतन करने की आवश्यकता है और वे वर्ष 2020 में मुद्रास्फीति की कुछ ऊँची ही दर देखना चाहेंगे। मान लीजिए कि फर्मों ने पिछले अनुभव से सीखा है कि कीमत स्तर विषयक अपने पूर्वानुमान को अद्यतन करते समय लगभग 50 प्रतिशत पूर्वानुमान त्रुटियोंको ठीक किए जाने की आवश्यकता होती है (इसका अर्थ है, $\lambda = 0.5$)। तदनुसार, वर्ष 2020 में प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर π_1 होगी, यथा,

$$\pi_t^e = \pi_{t-1}^e + \lambda(\pi_{t-1} - \pi_{t-1}^e)$$

$$= 3 + 0.5(6 - 3) = 4.5 \text{ प्रतिशत}।$$

अनुकूली प्रत्याशाओं संबंधी प्राक्कल्पना की संक्रिया सरल है। यह एक अन्य महत्वपूर्ण संकल्पना सामने लाता है, यथा, समष्टि अर्थशास्त्र में प्रत्याशाएँ, जिससे वह अधिक वास्तविक बन जाती है। तथापि, अनुकूली प्रत्याशाओं संबंधी प्राक्कल्पना की कुछ प्रमुख कमियाँ हैं। प्रथम, यह मॉडल मानकर चलता है कि लोग अपनी पिछली गलतियों से नहीं सीखते – वे अपने चालू वर्ष की प्रत्याशा λ से समंजित कर लेते हैं। इस प्रकार, वे वास्तविक मुद्रास्फीति दर के प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर से अधिक रहने पर भी मुद्रास्फीति की दर को कम ही आँकते रहते हैं। इसी प्रकार, वे वास्तविक मुद्रास्फीति दर के प्रत्याशित

मुद्रास्फीति दर से कम रहने पर भी मुद्रास्फीति की दर को अधिक ही आँकते रहते हैं। दूसरे, यह मॉडल मानकर चलता है कि लोग अपनी प्रत्याशाओं को विगत जानकारी पर ही आधारित मानकर चलते हैं। यह वर्तमान अथवा भावी घटनाओं को ध्यान में नहीं रखता है। उदाहरण के लिए, अनुकूली प्रत्याशाओं के तहत, जब सरकार कोई विस्तारकारी मौद्रिक नीति अपनाती है तो लोग यह अपेक्षा नहीं करते कि मुद्रास्फीति दर ऊपर जाएगी।

इसी प्रकार, जब अनावृष्टि जैसी कोई प्राकृतिक आपदा आती है तो लोग यह अपेक्षा नहीं करते कि कुल आपूर्ति घट जाएगी और कीमतें बढ़ जाएँगी।

अनुकूली प्रत्याशाओं की ऐसी कमियों ने ही अर्थशास्त्रियों को प्रेरित किया कि वे प्रत्याशाओं के वैकल्पिक सिद्धांत खोज निकालें।

9.5.2 युक्तियुक्त प्रत्याशाएँ

युक्तियुक्त प्रत्याशाओं (rational expectations) संबंधी प्राक्कल्पना यह मानकर चलती है कि परिवार और व्यापार प्रतिष्ठान उन्हें उपलब्ध सर्वोत्तम संभावित सूचना के आधार पर ही फैसला लेते हैं। इस प्रकार, वे न केवल पिछले रुझानों पर बल्कि वर्तमान एवं प्रत्याशित भावी घटनाओं पर भी विचार करते हैं। युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के अनुसार, लोग पिछली गलतियों से सीखते हैं। वे अपने पूर्वानुमान में गलत हो सकते हैं मगर औसतन वे सही ही होते हैं।

सरल पदों में, मुद्रास्फीति की प्रत्याशित दर अवधि t को निम्नवत् दर्शाया जाता है –

$$\pi_t^e = \pi_t + \varepsilon_t$$

उपर्युक्त समीकरण में, शून्य के प्रत्याशित मान के साथ, ε_t एक प्रसंभाव्य त्रुटि है। जबकि कुछ लोग अपने पूर्वानुमान में सकारात्मक त्रुटियाँ दर्शा सकते हैं, कुछ अन्य नकारात्मक त्रुटियाँ भी दर्शा सकते हैं। जब हम ऐसी त्रुटियों का कुल योग करते हैं तो वे इस अर्थ में निरस्त हो जाती हैं कि सकारात्मक त्रुटियों का योग नकारात्मक त्रुटियों के योग के बराबर हीहोता है। दूसरे, ये त्रुटियाँ कोई प्रतिमान नहीं दर्शातीय ये अपनी प्रकृति में यादृच्छिक होती हैं। याद करें कि अनुकूली प्रत्याशाओं के तहत ये त्रुटियाँ व्यवस्थित होती हैं (वे किसी प्रतिमान का अनुसरण करती हैं)।

युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के दो रूप देखे जाते हैं – अशक्त और सशक्त। इसके अशक्त रूप में यह मानकर चला जाता है कि लोगों को सीमित जानकारी ही सुलभ होती है। परंतु वे इस जानकारी का भरपूर प्रयोग करते हैं। चलिए, एक साकार उदाहरण लेते हैं। आप पारिवारिक खपत के लिए हर सप्ताह गेहूँ का आटा खरीदते हैं। आप बाजार में उपलब्ध आटे के सभी ब्रांडों की सापेक्ष कीमतें और पोषण स्तर नहीं जानते। स्वयं को प्राप्त सीमित जानकारी के आधार पर, बहरहाल, आप प्रायः एक ही ब्रांड खरीदते रहते हैं (और शायद एक ही दुकान से, इस बात से अनजान कि अन्य दुकानों पर यही आटा कम कीमत पर मिल रहा है!)।

युक्तियुक्त प्रत्याशाओं संबंधी प्राक्कल्पना के सशक्त रूप में यह मानकर चला जाता है कि लोगों के पास सारी जानकारी होती है। लिए गये निर्णय पूर्ण सूचना के आधार पर ही होते हैं। तदनुसार, उनकी अपेक्षाएँ वास्तविक मानों के बराबर होते हैं। पूर्वानुमान में कोई भी त्रुटि अप्रत्याशित घटनाचक्र की वजह से होती है।

9.6 प्रत्याशा–वर्धित फिलिप्स वक्र

ऊपर वर्णित फिलिप्स वक्र किसी भी अर्थव्यवस्था की अवरुद्ध स्फीति स्पष्ट नहीं कर सकता था। रुद्ध स्फीति (stagflation) स्पष्ट करने के लिए हमें अपने विश्लेषण में प्रत्याशाएँ शामिल करनी पड़ेंगी। वस्तुतः, चित्र 9.1 में दर्शाया गया फिलिप्स वक्र सत्य सिद्ध होगा यदि लोगों के मन में कोई प्रत्याशा परिवर्तन न हो। यदि लोग यह मानकर चलते हैं कि प्रत्याशाओं में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है तो फिलिप्स वक्र खिसक जाएगा।

अनुकूली प्रत्याशाएँ और युक्तियुक्त प्रत्याशाएँ, दोनों ही, फिलिप्स वक्र के लिए महत्वपूर्ण निहितार्थ रखती हैं।

9.6.1 अनुकूली प्रत्याशाओं के तहत फिलिप्स वक्र

व्यष्टि अर्थशास्त्र के संदर्भ में आपको ज्ञात है कि कर्मचारी और नियोक्ता नियोजन संबंधी निर्णय वास्तविक वेतन के आधार पर लेते हैं, न कि मौद्रिक वेतन के आधार पर। फ्रीडमैन और फेल्प्स के अनुसार, प्रत्याशाएँ निश्चय ही महत्व रखती हैं। तदनुसार, साम्य उत्पादन और वेतन दर निर्धारित करने के लिए 'प्रत्याशित वास्तविक वेतन' की जाँच की जानी चाहिए।

कर्मचारी प्रायः किसी समयावधि विशेष के लिए अपने वेतन के विषय में नियोक्ता से अनुबंध कर लेते हैं। इस अनुबंध अवधि के दौरान वेतन पर दोबारा मोलभाव नहीं किया जा सकता। इसे केवल अनुबंध अवधि समाप्त होने पर ही बदला जा सकता है। चूँकि कर्मचारियों को उक्त शर्तें ज्ञात होती हैं, वे अनुबंध में प्रत्याशित मुद्रास्फीति शामिल कर देते हैं। उदाहरण के लिए, यदि कर्मचारी उम्मीद करते हैं कि आगामी वर्ष में मुद्रास्फीति दर 3 प्रतिशत होगी तो वे वेतन दर पर इस भाँति मोलभाव करेंगे कि वास्तविक वेतन कीमत वृद्धि की वजह से घटे नहीं।

तीन प्रतिशत की किसी प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर के लिए, मान लीजिए कि फिलिप्स वक्र $SRPC_1$ (देखें चित्र 9.2)। मान लीजिए कि अर्थव्यवस्था बिंदु A पर है। इस बिंदु पर प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर π_1 है (माना 3 प्रतिशत) और बेरोजगारी दर अपनी स्वाभाविक दर पर ही है (माना 3 प्रतिशत)। कर्मचारी और फर्में 3 प्रतिशत की मुद्रास्फीति दर की अपेक्षा करते हैं और वह उन्हें मिल भी रही है। इस प्रकार, किसी परिवर्तन के लिए अर्थव्यवस्था पर कोई दबाव नहीं है।

$SRPC_1$ वक्र के एक छोर से दूसरे छोर तक मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच समझौताकारी समन्वयन देखा जाता है। यदि मुद्रास्फीति दर और ऊँची हुई तो वास्तविक वेतन घट जाएगा (क्योंकि अनुबंधों की वजह से मौद्रिक वेतन बढ़ाया नहीं जा सकता)। तदंतर, फर्में और अधिक श्रमिक काम पर रखेंगी, जिससे बेरोजगारी कम होने का रास्ता खुलेगा।

मान लीजिए कि सरकार कोई विस्तारकारी राजकोषीय नीति अपनाती है (राजकोषीय व्यय बढ़ जाता है अथवा कर दर घट जाती है), जिससे कुल माँग बढ़ जाएगी। परिणामतः कीमतों में वृद्धि होगी (अर्थात उच्चतर मुद्रास्फीति दर)।किसी विस्तारकारी मौद्रिक नीति, जैसे कि मुद्रा आपूर्ति में वृद्धि अथवा ब्याज दर में कमी, का भी यही प्रभाव होगा। इससे निवेश में वृद्धि का मार्ग प्रशस्त होगा, जो कि श्रमिकों की माँग में भी कुछ हद तक वृद्धि करेगा। दोनों में से किसी भी स्थिति में, मुद्रास्फीति दर में π_2 तक की वृद्धि (माना 6

प्रतिशत) होगी। बेरोजगारी की दर u_2 पर (स्वाभाविक दर से नीचे) दर्ज होगी। चित्र 9.2 में हमने संतुलन बिंदु B के रूप में दर्शाई है।

बिंदु B पर संतुलन, बहरहाल, अस्थाई ही है। कर्मचारी शीघ्र ही जान जाते हैं कि मुद्रास्फीति दर में अप्रत्याशित वृद्धि है। कीमत वृद्धि की भरपाई के लिए कर्मचारी पहले से ऊँची वेतन दर की माँग करेंगे।

यह फिलिप्स वक्र में $SRPC_1$ से $SRPC_2$ तक खिसकाव की ओर प्रवृत्त करेगा और अर्थव्यवस्था में संतुलन चित्र 9.2 के बिंदु C पर दिखाई देगी। परिणामतः, मुद्रास्फीति तो π_3 पर नजर आएगी जबकि बेरोजगारी अपनी स्वाभाविक दर, यथा, u* पर ही रहेगी।

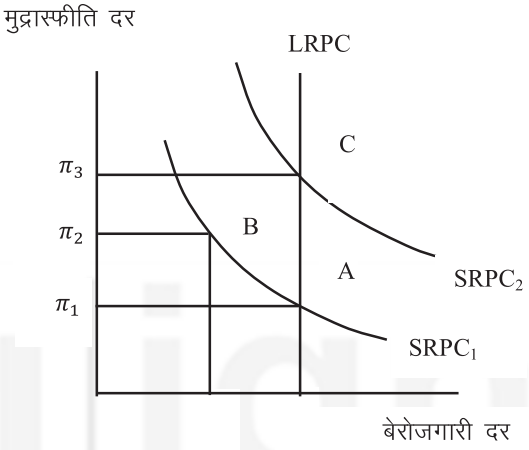

चित्र 9.4: फिलिप्स वक्र में खिसकाव

आप देखेंगे कि अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी वापस अपनी स्वाभाविक दर (6 प्रतिशत) पर आ गई है। मुद्रास्फीति दर, बहरहाल, काफी ऊँची (π_3) है। तदनुसार, सरकार का बेरोजगारी घटाकर मुद्रास्फीति की स्वाभाविक दर से नीचे ले आने का प्रयास महँगाई की उत्तरोत्तर वृद्धि में परिणत होता है। इस दृष्टिकोण से, मुद्रास्फीति की स्वाभाविक दर को प्रायः 'बेरोजगारी की गैर–गतिवर्धक मुद्रास्फीति दर' कहा जाता है। जब बेरोजगारी स्वाभाविक दर अथवा (Non-Inflation Accelerating Rate of Unemployment-NAIRU) पर हो तो मुद्रास्फीति की दर में स्थिरता देखी जाती है। जब बेरोजगारी स्वाभाविक दर से विलग होती है तो मुद्रास्फीति दर में गतिवर्धन अथवा गतिरोध दिखाई देता है। तदनुसार, यदि वास्तविक बेरोजगारी u से कम हुई तो आने वाले वर्षों में मुद्रास्फीति बढ़ती ही रहेगी – उत्तरोत्तर ऊँचे से ऊँचे। उक्त दर (NAIRU) और प्रत्याशाओं के निर्माण संबंधी संकल्पना ही अनेक देशों द्वारा झेली गई अति मुद्रास्फीति को स्पष्ट करती है। जब तक बेरोजगारी अपनी स्वाभाविक दर पर वापस नहीं आ जाती, मुद्रास्फीति चक्र गतिवर्धन करता ही रहेगा।

उपर्युक्त विश्लेषण हमारे समक्ष एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष रखता है। अनुकूली प्रत्याशाओं के तहत, अल्पावधि में फिलिप्स वक्र ऋणात्मक ढलान होता है। दीर्घावधि में, बहरहाल, वह ऊर्ध्वाकार होता है। चित्र 9.2 में, लंबवत रेखा LRPC दीर्घावधि फिलिप्स वक्र दर्शाती है। इस प्रकार, दीर्घावधि में मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच कोई समझौताकारी समन्वयन नहीं देखा जाता।

9.6.2 युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के तहत फिलिप्स वक्र

युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के तहत, फर्मों और परिवारों जैसे आर्थिक अभिकर्ता दूरंदेशी होते हैं। वे अर्थव्यवस्था में उपलब्ध सभी जानकारी– पिछले अनुभव के साथ–साथ वर्तमान एवं भावी घटनाक्रम– को ध्यान में रखते हैं। इन अपेक्षाओं के अन्तर्गत कोई पूर्ण दूरदर्शिता नहीं हुआ करती। त्रुटियाँ, बहरहाल, समग्रतः निरस्त होती हैं।

उपर्युक्त का एक निहितार्थ यह है कि वास्तविक मुद्रास्फीति दर प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर के बराबर होती है। तदनुसार, कर्मचारी और व्यापार प्रतिष्ठान मोलभाव के दौरान वेतन दर के संदर्भ में कोई गलती नहीं करते।

इस प्रकार, अल्पावधि तक में युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के तहत, मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच कोई समझौताकारी समन्वयन नहीं देखा जाता। अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी दर अपनी स्वाभाविक दर पर ही रहती है।

मान लीजिए कि अर्थव्यवस्था में बेरोजगारी दर अपनी स्वाभाविक दर पर है। फर्में और कर्मचारी मुद्रास्फीति π_1^e की दर पर रहने की उम्मीद करते हैं। मान लीजिए कि सरकार कोई विस्तारकारी नीति अपनाती है, जिसके फलस्वरूप कुल माँग में वृद्धि देखी जाती है। यदि यह नीति आर्थिक अभिकर्ताओं द्वारा प्रत्याशित थी तो उन्होंने निर्णयन में मुद्रास्फीति दर में वृद्धि का सकारात्मक असर लिया होगा।यदि नीति, बहरहाल, अप्रत्याशित है तो इसका वांछित प्रभाव होगा, यथा, बेरोजगारी में कमी। इससे हमारे समक्ष एक महत्वपूर्ण मुद्दा आता है – युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के तहत सरकारी नीति कितनी प्रभावी है? यदि सरकारी नीति प्रत्याशित है तो इसका कोई असर नहीं पड़ेगा।

बोध प्रश्न 2

1. वर्ष 2019 में मुद्रास्फीति की प्रत्याशित दर 7 प्रतिशत थी जबकि मुद्रास्फीति की वास्तविक दर 5 प्रतिशत ही रही। यदि $\lambda = 0.5$ तो वर्ष 2020 के लिए प्रत्याशित मुद्रास्फीति दर ज्ञात करें।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

2. ऊर्ध्वाकार दीर्घावधि फिलिप्स वक्र का ऋणात्मक ढलान अल्पावधि फिलिप्स वक्र से मिलाप आप किस प्रकार दर्शाएँगे? एक आरेख की सहायता से समझाएँ।

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

   .....

3. निम्नलिखित संकल्पनाओं को स्पष्ट करें –

(i) अनुकूली प्रत्याशाएँ

(ii) युक्तियुक्त प्रत्याशाएँ

(iii) बेरोजगारी की गैर–गतिवर्धक मुद्रास्फीति दर (NAIRU)

(iv) दीर्घावधि फिलिप्स वक्र

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9.7 सार–संक्षेप

बेरोजगारी के फलस्वरूप न केवल समष्टि स्तर पर संभावित उत्पादन की, बल्कि व्यष्टि स्तर पर आय की भी हानि होती है। कई बार जब अर्थव्यवस्था में व्यापक बेरोजगारी होती है तो यह संकटपूर्ण स्थिति में परिणत होती है। बेरोजगारी से जुड़ा सामाजिक कलंक और मनोवैज्ञानिक आघात प्रायः नीति–निर्माताओं को बाध्य करते हैं कि वेबेरोजगारी की दर घटाने का उपक्रम करें।

परंपरागत अर्थशास्त्रियों की परिकल्पना के अनुसार वास्तविक वेतन और कीमतों में लचीलापन होता है जो सदैव अर्थव्यवस्था में पूर्ण रोजगार सुनिश्चित कर देता है।

केन्जियन अर्थशास्त्री, बहरहाल, इस प्रकार की अवधारणा का प्रतिकार करते हैं और वेतन दर व कीमतों में कड़ापन होने की बात करते हैं। स्थिर कीमतों के मामले में केन्जियन मॉडल के अनुसार बेरोजगारी की संभावना होती ही है। फिलिप्स वक्र मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच ऋणात्मक संबंध की व्याख्या करता है। यह इस संभावना को दर्शाता है कि बेरोजगारी उच्चतर मुद्रास्फीति की लागत पर घटाई जा सकती है।

सत्तर के दशक में विश्व की अधिकांश अर्थव्यवस्थाएँ अवरुद्ध स्फीति के दौर से गुजरीं। मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच समझौताकारी समन्वयन गलत सिद्ध हुआ। इस प्रकार की स्थिति को स्पष्ट करने के लिए हम प्रत्याशाओं को अपने विश्लेषण के अन्तर्गत लाते हैं। प्रत्याशाओं के दो प्रतिमान देखने में आते हैं – अनुकूली और युक्तियुक्त।

अनुकूली प्रत्याशाओं के अनुसार, फिलिप्स वक्र अल्पावधि में स्थिर रहता है, परंतु दीर्घावधि में वह खिसक जाता है। यह दीर्घावधि फिलिप्स वक्र ऊर्ध्वाकार होता है। तदनुसार, अल्पावधि में मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच कुछ समझौताकारी समन्वयन हो सकता है, परंतु दीर्घावधि में ऐसा कोई समझौताकारी समन्वयन नहीं होता। हमने उस प्रक्रिया को स्पष्ट किया जिसके माध्यम से फिलिप्स वक्र में खिसकाव होता है। दूसरी ओर, युक्तियुक्त प्रत्याशाओं के अनुसार, मुद्रास्फीति और बेरोजगारी के बीच कोई समझौताकारी समन्वयन नहीं हुआ करता। बेरोजगारी घटाने के लिए सरकार की कोई भी नीति कारगर सिद्ध नहीं होती क्योंकि लोग प्रत्याशित परिवर्तनों का सही–सही अनुमान लगा लेते हैं।

9.8 बोध प्रश्नों के उत्तर अथवा संकेत

बोध प्रश्न 1

1. आपके उत्तर में प्रतिरोधात्मक, संरचनात्मक और चक्रीय बेरोजगारी शामिल होने चाहिए। विस्तृत विवरण के लिए खंड 9.2 पढ़ें।
2. खंड 9.3 पढ़ें और चित्र 9.1 का संदर्भ लें।
3. इन संकल्पनाओं पर खंड 9.2 और 9.3 में चर्चा की गई है।

बोध प्रश्न 2

1. खंड 9.5.1 में दिया गया सूत्र प्रयोग करें। आपका उत्तर 6 प्रतिशत होना चाहिए।
2. खंड 9.6.1 देखें। यहाँ चित्र 9.2 की व्याख्या की जानी चाहिए।
3. इन संकल्पनाओं को खंड 9.5 और 9.6 में परिभाषित किया गया है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY